सर्वोदय की बुनियाद
शांति-स्थापना

विनोबाजी के शांति-सेना सबधी चुने हुए प्रवचनों सहित

लेखक
हरिभाऊ उपाध्याय

१९५७
सस्ता साहित्य प्रकाशन

प्रकाशकीय

हिंसा का मुकाबला किस प्रकार किया जाय, यह समस्या बहुत समय से देश के सामने रही है। जब से देश आजाद हुआ है, तब से तो इस समस्या की ओर राष्ट्र के चितको तथा कर्णधारो का ध्यान और भी आकृष्ट हुआ है। कुछ समय पहले इसी विषय पर एक पुस्तिका प्रकाशित हुई थी—"हिंसा का मुकाबला कैसे करे ?" उसमे शाति-सेना की स्थापना पर जोर दिया गया था और बताया गया था कि उसका सगठन किस प्रकार किया जा सकता है।

शाति-स्थापना के विषय को लेकर ही यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। इसमे शाति-सेना के साथ-साथ अन्य कई बातो पर भी विचार किया गया है। इसमे कोई संदेह नही कि इस पुस्तक में पर्याप्त विचार-सामग्री दी गई है और हमे आशा है कि वह लोगो को सोचने के लिए प्रेरित करेगी।

पुस्तक के अंत मे पू० विनोबाजी के कुछ शाति-सेना सबंधी प्रवचन भी दे दिये गए हैं। पाठक जानते है कि विनोबाजी एक महान चिंतक है और वह जिस किसी प्रश्न को लेते हैं, उसकी तह मे जाते हैं। शाति-सेना के विचार की पृष्ठ भूमि तथा सगठन आदि के विषय मे उन्होने जो विचार प्रस्तुत किये है, वे अत्यत उपयोगी है।

हमे विश्वास है कि यह पुस्तक सभी पाठको के लिए बडी उपयोगी सिद्ध होगी—विशेषकर उन रचनात्मक कार्यकर्ताओ के लिए, जिन पर हिंसा का अहिंसात्मक ढंग से सामना करने का दायित्व है।

—मत्री

प्रास्ताविक

"हिंसा का मुकावला कैसे करे ?" नामक एक पुस्तिका मैने लिखी है जिसमें देश मे शाति-स्थापना तथा शाति-दल के आयोजन के सबंध मे कुछ विचार तथा सुझाव पाठको के सामने रखे है। उसे देखकर पचासो, मित्रो साथियो, वुजर्गो ने, जिनमे भिन्न-भिन्न विचारो, सस्थाओं और सगठनो के प्रभावशाली प्रतिनिधि है, अपने सुझाव देने की कृपा की है। उनको ध्यान मे रखकर यह दूसरी पुस्तिका मैने तैयार की है। पहली पुस्तिका मे विचार और सुझाव तो कई है, परतु वे सब विखरे हुए है। इसमे मैने शाति-स्थापना सबंधी अपने विचार तथा सुझाव व्यवस्थित ढग से लिखने की कोशिश की है। अब भी यह तो नही कहा जा सकता कि शाति-स्थापना की दृष्टि से यह परिपूर्ण है, परतु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस सबंध में मुझे पाठको से जो-कुछ कहना है, वह ठीक ढग से आ गया है। यह पुस्तिका पिछले दिस-बर मे तैयार हो चुकी थी—प्रकाशित होने का अवसर अब आया है।

शाति-विचार के वारे मे सहसा मतभेद न होगा, यह मै जानता हू। शाति-योजना मे व्यावहारिकता-अव्यावहारिकता, उपयोगिता-अनुपयोगिता को लेकर मतभेद हो सकता है। प्रयोग और अनुभव से वह दूर हो सकता है और विचारो मे सशोधन भी किया जा सकता है। कोई भी विचार और आयोजन प्रयोग और अनुभव की कसौटी पर कसे विना खरे और स्थायी नही समझे जा सकते। अतः प्रयोग और अनुभव की आव-श्यकता है। मुझे वहुत खुशी है कि पूज्य विनोवा ने इसका प्रयोग आरंभ कर दिया है। उन्होने शाति-सेना की स्थापना पर वहुत वल देना शुरू कर दिया है। उनसे वढकर इसका अधिकारी इस समय शायद ही दूसरा कोई हो। वह इस विषय में निरतर प्रकाश डालते रहते है। इसके एक खड मे उनके भाषणो, लेखो आदि का सग्रह दे दिया है। शाति-स्थापना अव कोरी चर्चा का विषय नहीं रहा, वल्कि प्रत्यक्ष कार्य की

कोटि में पहुच गया है। अतः जिस उद्देश्य से मैंने ये पुस्तिकाए लिखना शुरू किया था, उसकी सिद्धि के लक्षण प्रगट होते देखकर मैं परमात्मा के के प्रति प्रणत होता हूं। विनोबा के नेतृत्व में इसका संचालन इसकी सफलता का पूर्व चिह्न है। विनोबा से बढकर इसका अधिकारी नही—और इससे श्रेष्ठ जीवन-कार्य विनोबा के लिए भी दूसरा नही रहा। भगवान की इस वेला पर कौन मुग्ध नही होगा ?

मुझे विश्वास है कि यह पुस्तिका शाति-स्थापना की दिशा में ठीक-ठीक सहायक होगी।

गांधी आश्रम, हटुंडी

दीपावली, २०१४

२२ अक्टूबर, १९५७

—हरिभाऊ उपाध्याय

विषय-सूची

सर्वोदय की बुनियाद

शांति-स्थापना

●

: १ :

शांति का विचार

शाति की आवश्यकता सभी समय मे और सभी देशो मे मानी गई है। फर्क यह है कि अबतक शस्त्र के द्वारा, युद्धो के द्वारा शाति तथा न्याय की रक्षा का एक मार्ग चला आ रहा था। अब, खासकर गाधीयुग में, शाति अर्थात अहिसा या शस्त्र-त्याग के द्वारा शाति और न्याय की रक्षा का महत्व लोग मानने लगे है। इनमे केवल आत्मशाति चाहनेवाले साधु, महात्मा, विरक्त, मुक्त, सन्यासी श्रेणी के ही लोग नही है, बल्कि समाज-सुधारक, देश-नेता, राष्ट्र-सचालक और शासनाधिकारी भी है। हमारे राष्ट्रनेता जवाहरलालजी ने पचशील की आवाज बुलद करके सारे ससार मे एक शाति का वातावरण पैदा कर दिया है--नीचे से ऊपर तक सब लोग शाति के प्रत्यक्ष उपाय, राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय स्तर पर, सोचने लगे है। यह कोरा खयाली सवाल नही रहा, व्यावहारिक कोटि का माना जाने लगा है, व्यावहारिक रूप से इसपर विचार होने लगा है, शाति-दल बनाने, की तजवीजे चल रही है, शाति-प्रचारक और शाति-स्थापक भिन्न-भिन्न सस्थाओ और सगठनो का भी प्रादुर्भाव हो रहा है। गाधी आश्रम, हटूडी (अजमेर) के द्वारा गाधी शाति-दल की स्थापना भी हो चुकी है, परतु अभी आम लोगो मे इसके प्रचार और प्रसार की बहुत आवश्यकता है।

शाति एक बुनियादी सवाल है। इसके बिना सर्वोदय की तो कल्पना ही नही की जा सकती। घर मे, संस्था मे, समाज मे, राष्ट्र मे, विश्व में नित्य कलह, अशाति, सघर्ष के अवसर उपस्थित होते है। छोटे-बड़े मतभेद, विवाद, ईर्ष्या-द्वेष बडे-बडे कलह और सघर्ष का रूप धारण कर

लेते है। निजी और सार्वजनिक लाखो रुपयो का नुकसान, जान-माल की बरबादी, बहू-बेटियों और माताओ के अपमान की नौबत आती है। बड़े-बडे युद्ध और अणु बम तक के भयकर विनाशक आविष्कार इसीके परिणाम है। अत. यदि इनकी रोक न की जाय तो 'सर्वोदय' की आशा कैसे की जा सकती है? इसके लिए सबसे पहले हमारे विचारो और भावनाओ मे परिवर्तन करना होगा। शस्त्र, उपद्रव, युद्ध, हिंसाकाड के द्वारा इनका फैसला कराने की अपेक्षा, आपस के विचार-विनिमय, समझौते, पच-फैसले, अदालत आदि शातिमय तरीको से ही छोटे-से-छोटे और बडे-से-बडे मतभेदो, विवादो और झगड़ो को निपटाने का महत्व समझना होगा। इसे तरजीह देनी होगी। हमारे मन और बुद्धि पर ऐसे सस्कार डालने होगे, ऐसी प्रणालिया जारी करनी होगी, और शाति-दलो की स्थापना करनी होगी। यह सारा कार्यक्रम तीन भागो मे बैठ जाता है—(१) शाति के विचार और भावो का प्रसार (२) शाति के सस्कार मन-बुद्धि पर डालने के उपाय (३) प्रत्यक्ष शाति-भग की अवस्था मे शाति-पूर्वक शाति-स्थापना करनेवाले दल या दलों का संगठन। इस तीसरे भाग के फिर दो विभाग हो जाते है—निवारक और रक्षक। इनपर हम क्रमश विचार करेंगे।

इनमे पहले शाति के विचार को ले। शाति की महिमा हमे अशाति, हिसा, उपद्रव के मुकाबले मे समझाना है। हमे अपने घर का, संस्था का, समाज का नित्य अनुभव होता है। वह हमे अशाति की अपेक्षा शाति की ही ओर प्रेरित करता है। तो अब शाति और हिंसा इनमें कौन श्रेष्ठ है—इसकी जाच कैसे की जाय? इसके लिए एक प्रयोग कीजिये। पहले आप यह मानकर चलिये कि हिंसा, कलह, उपद्रव अच्छी चीज है। जो अच्छी चीज है, उसे अपनाना चाहिए। खुद भी उसे लेना चाहिए। दूसरो को भी देना चाहिए। अपनी निजी, अपने घर की समस्याओं, कठिनाइयो को हल करने के लिए आप यह निश्चय कर लीजिये कि मैं हिंसा, मार-काट, कलह, उपद्रव के द्वारा ही उन्हे सुलझाऊगा। किसी भी दशा मे अहिंसा, शाति, प्रेम, सहयोग, सद्भाव का आश्रय नही लूगा क्योंकि

इन सबको हमने बुरा मान लिया है। जो बुरी बातें है उन्हे हमे छोडना है निश्चयपूर्वक दृढता से छोडना है। जो अच्छी बाते है, उन्हे उतनी ही दृढता और निश्चय के साथ अपनाना है। तो अब हिंसा और उपद्रव के साथ ही अपने जीवन और दिवस का प्रारभ करे। बच्चा समय पर नही उठा—लगा दिया एक चाटा। पत्नी ने चाय ठडी कर दी—दीजिये दो-चार गाली, रसीद कीजिये एक-दो चाटे। पिताजी के कपडे आपने ठीक-ठीक नही सिलाये—लगाई उन्होने दो बेत आपको। पडौसी ने कचरा आपके दरवाजे पर फेक दिया—आप पहुचे दलबल और लाठी लेकर उसे मारने। आपकी बछिया पडौसी के बाडे मे घुस गई और लौकी की बेल को खा गई। पडोसी आया कुल्हाडा लेकर आप पर हमला करने। दोनो तरफ से दल-वल आगे आया और हो गया फिसाद। यही दंगा बन गया। चौवीस घटे आपके घर मे, पडौस मे, महल्ले मे, गाव मे, समाज मे, सस्था मे, राष्ट्र मे—ऐसा ही सिलसिला चलता रहे, तब जरा कल्पना तो कीजिये, आपके घर का पडौस का, गाव का, महल्ले आदि का क्या हाल होगा? एक दिन मे ही आप परेशान होकर पागल हो जायगे। यदि यह अनुभव या अनुमान सही है तो फिर इस साधन, सिलसिले या रास्ते को छोडना चाहिए। उसे जो हम अच्छा मानकर चले थे, वह गलती थी। यह तो एक जंजाल खडा हो गया। तो अब क्या करना चाहिए?

जवाव साफ है। हिसा, उपद्रव, मारकाट का रास्ता छोडने का निश्चय करना चाहिए। यह सकल्प करना चाहिए कि हम अपने घर, सस्था, महल्ला, गाव, समाज, राष्ट्र की समस्याये, विवाद, झगड़े आदि शाति, सहयोग, सद्‌भावना, विचार-विनिमय तथा समझौते के आधार पर और इनके जरिये तय करेगे। अब इसी तरह इस शाति और सद्‌भाव के साधन को आजमाकर देख लीजिये। आपको अशाति के मुकावले मे शाति के साधन ज्यादा सुखदायी मालूम होगे। यदि यह बात सही है तो क्या अब भी आपको यह समझाने की आवश्यकता बाकी रहेगी कि अशाति की अपेक्षा, हिंसा की अपेक्षा शाति और अहिंसा का मार्ग और साधन अच्छे है?

यदि किसी की समझ मे यह बात आ गई तो हमारा पहला काम, यानी शांति की महत्ता समझाने का, पूरा हो गया । लेकिन इतने से काम नही चलता । समझने के बाद वर्ताव भी होना चाहिए । समझने से वर्ताव ज्यादा मुश्किल है । उसमें हमे अपने स्वभाव, अपने संस्कार,अपने रहन-सहन, अपनी परिस्थिति, अपने रंग-ढग सबके साथ लड़ना होगा । जो अशांति, उपद्रव, मारकाट के संस्कार मन पर पडे हुए है, हिंसा की प्रेरणाओ से जो अबतक हम अपना जीवन, घर, आदि चलाते थे, अब उसे पलटकर अहिंसा या शाति की दिशा मे ले जाना होगा । हिंसा की प्रेरणाओं को रोककर, अहिंसा की प्रेरणाओ को बलवान बनाना होगा । अर्थात अपने मन को अपनी समझ के अनुसार चलने पर समझाना, मनाना, और बाध्य भी करना होगा । इसमे कुछ समय लगेगा—कभी आप सफल होंगे—कभी विफल । कभी कटु अनुभवों से हताश होंगे तो कभी मीठे अनुभवो मे हर्ष और आनद भी होगा, उत्साह भी बढेगा । इस तरह कशमकश के साथ हमें आगे बढना होगा । इसके लिए हमे केवल अपने मन की तैयारी करना ही काफी न होगा—जीवन, घर, समाज के संचालन की उप-प्रणालियो को भी, नियमो को भी, आचारो और परपराओ को भी बदलना होगा, जो हमारे मन पर अशाति के कुसस्कार डाले हुए है या मजबूत किये हुए हैं ।

पहले हम घर से लें । अब हमने यह निश्चय कर लिया है कि अपने तथा घर के सब प्रश्न अहिंसा और शांति के साथ निपटायेंगे । तो सबसे पहले क्या करना होगा । जहां-कही कोई प्रश्न या विवाद खडा हुआ कि हम फौरन बैठकर आपस में उसकी चर्चा करेंगे, उसके कारणों की खोज करेंगे, किसकी क्या गलती है, असावधानी है, यह देखेंगे । अपनी क्या गलती है, भूल है, भ्रम है, यह भी देखेंगे, यदि दूसरे के कसूर है तो उसे भी बतायेंगे । यदि हम इस प्रक्रिया का आश्रय लेते है और लेना ही चाहिए, तो, आप भी मानेंगे, कि आपका आधा काम हो गया—बहुत करके तो समस्या या विवाद इसी अवस्था या स्तर पर समाप्त हो जायगा । मगर फर्ज कीजिये कि आपस का यह विचार-विनिमय असफल रहा, कोई समझौता

न हो सका, तो फिर या तो आप अदालत मे जायेंगे, या आपस मे किसीको पच बनाकर उसके सिपुर्द मामला कर देगे और उसके फैसले को मजूर कर लेगे। अदालत भी एक तरह का शाति-मार्ग ही है। परतु उसमे कानून-कायदे जाब्ते की इतनी उलझने वढ़ गई है और कागजी लिखावट व सवूत का इतना झमेला हो गया है कि न तो न्याय जल्दी मिल पाता है, और न सही न्याय ही बहुत बार होता है। अत. पच-फैसले का साधन अदालत से ज्यादा सुगम, सस्ता और सही न्यायदायी है और हो सकता है। यह प्रणाली केवल घर और सस्था ही नही, समाज, राष्ट्र और विश्व की व्यवस्था तथा शाति के लिए भी उपयोगी और हितकर होगी। यह इतनी कठिन भी नही है। तो हमे आज से ही इस प्रणाली को प्रचलित कर देना चाहिए। इसमे किसी कानून-कायदे जाब्ते का विशेष सवाल नही है—दोनो पक्ष जिसको ठीक समझे, जिनपर विश्वास हो, ऐसे को पच वना ले। वस इतना ही करना होगा।

पच भी दो तरह से वनाये जा सकते है—दोनो पक्ष मिलकर किसी एक व्यक्ति को चुन ले—या दोनो अपने-अपने विश्वास का एक-एक व्यक्ति चुन ले और उन दोनो मे मतभेद हो तो वे दोनो एक तीसरे निष्पक्ष आदमी को सरपच वनाले और उसकी सहायता से निर्णय करले। इसकी और और भी विधिया वताई जा सकती है। किंतु मूल वात यह है कि हम या तो आपस मे समझौता कर लेंगे, या पच-फैसले का सहारा ले लेगे। किसी भी दशा मे हम गाली-गलौज या मारपीट—हिंसा पर उतारू न होगे।

इस तरह यदि हम प्रारभ मे ही सावधान रहेंगे, इस प्राथमिक विधि पर चलेंगे तो फिर आगे बडे झगडे और उपद्रव अपने-आप रुक जायेंगे। अत. शाति-स्थापना के लिए सवसे पहले यही कदम उठाया जाना चाहिए।

: २ :

शांति का संस्कार—१

नई तरह के न्यायालय हों

शाति के सस्कार मन पर डालने और जीवन को शाति के साचे मे ढालने के लिए कुछ उपाय वहुत महत्वपूर्ण है, जिनमे एक तो यह कि हम देखें कि हमारे घर मे शातिमय साधनो का प्रवेश ही नही हो, प्रतिष्ठा भी हो। हमारे वच्चे, वहू-वेटियां, वडे-वूढे सब आपस मे विचार-विनिमय, समझौते और पच फैसले के जरिये अपने मतभेद, विवाद, समस्याएं आदि हल करें। दूसरे हमे विद्यालयो मे इस प्रणाली को दाखिल करना चाहिए। यदि हम विद्यालयो, छात्रालयो, सस्थाओ और सगठनो मे इस भावना और इस प्रणाली का प्रवेश कर देते है और वह प्रतिष्ठित हो जाती है, तो हम आगे जाकर समाज मे से अशांति और हिंसा का उच्छेद करने मे कामयाव हो जाते है। यही नही वल्कि उसकी जड प्रारभ मे ही जमने नही पाती, या खोखली हो जाती है। पहले हम विद्यालय और छात्रा-लय को लेगे।

हरएक विद्यालय और छात्रालय मे वच्चो की एक अदालत वनाई जाय। वडे विद्यार्थी न्यायाधीश हो। विद्यार्थी उनका चुनाव करे। न्यायाधीश समय-समय पर वदलते भी रह सकते है। अव फर्ज कीजिये कि लडको या लडकियो अर्थात विद्यार्थियो में आपस में किसी वात पर झगडा हो गया। आज ऐसी हालत में विद्यार्थी क्लास-टीचर के पास शिकायत लेकर जाता है और वह जिस तरह ठीक समझता है, समझा-वुझाकर, डाट-डपटकर, उपेक्षा करके, या अत मे सजा देकर इस प्रश्न को समाप्त कर देता है और वह मन मे सतोष मान लेता है कि उसने अपना कर्तव्य पूरा कर लिया। लेकिन यह ठीक व काफी नही है। इसकी जगह अव यह तरीका जारी होना चाहिए—विद्यार्थी शिकायत लेकर आये तो

क्लास-टीचर या वोर्डिंग का सुपरिटेडेट शिकायत सुनकर पहले उन्हे उलहना दे कि अरे तुम एक स्कूल के विद्यार्थी, एक छात्रालय के छात्र, भाई-वहन की तरह रहनेवाले, आपस मे लडते हो ? यह तो अच्छा नही है। अच्छा जाओ, अव आपस मे मिलकर समझौता करलो और देखो, एक-दूसरे की गलती या कुसूर न दिखाकर अपनी-अपनी गलती या कुसूर को देखने की कोशिश करो। २४ घटे की मोहलत हम तुमको देते है। आपस मे समझौता करके आ जाओ।

अव इससे कई फायदे हुए—पहला तो यह कि क्लास-टीचर का पढाई का वक्त वच गया, उसको जिम्मेदारी का बोझा भी कम हुआ, दूसरे वच्चो के मन पर सस्कार पडा आपस मे न लडने का, खुद अपनी गलती देखने का, फिर आपस मे समझौता कर लेने का। अर्थात पहले मे उनका भ्रातृ-भाव बढा, दूसरे मे आत्मनिरीक्षण की प्रवृत्ति, तीसरे मे समझौता और सहयोग-वृत्ति की पुष्टि हुई। शाति-पालन और शात-जीवन की यह वुनियादी वात आपने विद्यार्थियो को सिखाई।

अव यदि विद्यार्थी समझौता करके आ गए, तो आपका इस तात्कालिक झगडे का ही नही, भावी शाति-स्थापना का काम भी सरल हो गया। वे दुवारा या तो आपस मे झगडेगे नही, यदि झगडे, तो परस्पर आत्मनिरीक्षण के द्वारा विवाद को बढायेंगे नही, वढा तो आपस के समझौते से उसे निपटा लेगे। मगर अव मान लीजिये कि समझौता नही हुआ, तो फिर क्लास-टीचर उस झगडे को उनके न्यायालय मे भेजे, जो उनकी अपनी और अपनी वनाई हुई है। न्यायालय मे न्यायाधीश मामले को लेकर पहले उन्हे उलाहना दे कि अच्छा तुम लोग आपस मे झगडे भी और फैसला भी नही कर पाये ? यह तो अच्छी वात नही है। अच्छा हम फिर तुमको २४ घटे का समय देते है। कलतक समझौता करके आ जाओ—नही तो फिर कल तुम्हारा मामला पेश होगा।

इससे उन्हे एक वार फिर झगडा न करने तथा समझौता करने की प्रेरणा मिली। इस दुवारा की प्रेरणा से उनके मन पर शाति, सहयोग, सद्भावना

के संस्कार और दृढ होगे ।अ व भी यदि समझौता न हो, तो न्यायाधीश मामला सुनकर अपना फैसला देगा । न्यायाधीश आखिर तो विद्यार्थी ही है, उसकी सहायता के लिए शिक्षक रहेगे । फैसला देने के बाद न्यायाधीश फरीकैन से पूछ ले कि बोलो भाई—इंसाफ ठीक हुआ या नही ? यदि वे कहें कि नही, तो न्यायाधीश एक बार फिर पुनर्विचार कर ले—वरना अपने फैसले को अंतिम मानकर सुना दे ।

अब आया सवाल सजा का । सजाओं की वर्तमान परिपाटी अच्छी नही है । उसकी जगह हमारी राय मे दूसरी स्वस्थ और शिक्षा तथा संस्कार-दायक प्रणाली जारी करनी चाहिए । हमारी राय में विद्यार्थी-संघ के द्वारा सजाओं की एक सूची स्वीकृत होनी चाहिए । उनमे कोई-न-कोई शारीरिक श्रम—वह भी उत्पादक श्रम, होना चाहिए । चरखा कातना, पेड़ सीचना, गोबर उठाना, खेत मे पानी देना आदि । आमतौर पर हम इन्हें दैनिक कर्त्तव्य या यज्ञ रूप में करते हैं । परंतु इस समय दोषी विद्यार्थी इसे दड-स्वरूप करेगा । इसे दड न कहकर प्रायश्चित्त भी कह सकते है, क्योकि न्यायाधीश उसे अपनी तरफ से सजा नही सुनायेगा, बल्कि अपराधी से पूछेगा कि बताओ तुम कौन-सी सजा मांगते हो । अधिकृत सूची मे से अपनी मर्जी की एक सजा तुम चुन लो । वही सजा उसे दी जायगी । स्वेच्छा से चुनी हुई होने के कारण उसे प्रायश्चित्त भी कह सकते हैं । इस प्रायश्चित्त से उसके मन पर यह संस्कार पड़ेगा कि किसी दूसरे ने मुझे दड नही दिया है, मैंने स्वयं अपने वास्तविक या न्यायालय द्वारा घोषित अपराध के लिए—अपने मन को जागरूक रखने के लिए, सबक सीखने के लिए, यह प्रायश्चित्त किया है । इसका असर उसके जीवन पर गहरा पड़ेगा—और दंड-स्वरूप श्रम के परिणाम से कोई उपयोगी और उत्पादक काम भी हो जायगा ।

यह प्रथा हर छोटे-बडे विद्यालय मे दाखिल की जा सकती है । न यह कठिन है, न खर्चीली है और न इसमे कोई पेचीदगी है । सीधे-सादा तरीके से आपके बच्चे, आपके विद्यार्थी शान्तिप्रिय, प्रेम-सहयोग, भावपूर्ण,

समझौता-वृत्ति के बनते जायेंगे। अब कल्पना कीजिये कि एक तरफ से आपने अपने घर को सभाला, दूसरी तरफ से विद्यालयों को, और इसी तरह सस्थाओ तथा सगठनो को, तो फिर ८-१० साल मे ही आप बिल्कुल नई पीढी को शाति के संस्कारो से युक्त पायेंगे और आपके सामने आज जो समाज-विरोधी या विध्वसक तत्वो का और शक्तियो का प्रश्न मुह बाये खडा है, वह आसानी से हल हो जायगा, यह बात समझ मे आना मुश्किल नही है।

यही प्रथा यदि कारखानो, सघो, दफ्तरो, ग्रामो, ग्राम-पचायतो तथा हमारे छोटे-बड़े सरकारी न्यायालयो में भी दाखिल कर दी जाय, तो फिर नई पीढी का जो चित्र आपके सामने खडा हो सकता है, वह कितना भव्य, सुखद तथा शातिप्रद होगा ? इससे एक-ही-दो पीढी मे आप सर्वोदय को सामने आता देख सकते हैं।

हमारे खेलो की प्रणाली, नाटक-सगीत-कला-साहित्य की परिपाटी, इन पर भी इसी तरह विचार किया जाकर शाति तथा सद्भावप्रेरक और पूरक नई प्रणालिया सोची और चलाई जा सकती हैं। यदि हमे अपने लोकतत्र को सफल बनाना है, राष्ट्र निर्माण की योजनाओ को तेजी से आगे बढाना है, आर्थिक विषमता मिटाकर समता की ओर लोक-मानस को झुकाना है, तो इस तरह हमे सोचना ही होगा और नये विचार, सस्कार तथा प्रयोग करने ही होगे।

: ३ :

शांति का संस्कार—२

हमने पहले कहा है कि परिवार या सस्था मे शाति बनाये रखने के लिए भी हमे इसी प्रकार के उपाय ढूढने होगे। थोडी गहराई से सोचा जाय तो यह बात हमारी दृष्टि मे आ ही जाती है कि परिवार या संस्था ही नही, गाव या समाज के झगडो का मूल कारण भी स्वार्थ या हित-विरोध होता है।

प्राय. जब किसी बात मे किसी एक व्यक्ति, परिवार या सस्था का हित

होता है और जब वह दूसरे व्यक्ति परिवार या संस्था के हित के विरुद्ध वन जाता है, तो सघर्ष या झगडा अनिवार्य हो जाता है । यदि पारिवारिक झगड़ों से लेकर राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय झगड़ो तक के मूल कारणो को खोजने का प्रयत्न किया जाय और उनके ऊपर पडे हुए अनेकानेक रेशमी आवरणों को हटा दिया जाय,तो हित-विरोध का यह मूल कारण स्पष्ट रूप मे दिखाई पड़ जाता है । ऐसी स्थिति मे निवारक दल अथवा शाति मे विश्वास रखने-वाले लोगो का यह प्रमुख कार्य होगा कि वे इस हित-विरोध को रोकने का प्रयत्न करे । वैसे प्रत्येक व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र के कुछ-न-कुछ हित होते ही हैं और उनका साधन ही उनका लक्ष्य होता है, किंतु वह हित-साधन इस प्रकार हो कि उनका हित दूसरो के हित का साधक एव अविरोधी हो । यदि हम अपने हितो को अविरोधी वनाने की कला सीख जायं, तो दुनिया से अशाति और हिंसा को हमेशा के लिए निर्वासित कर सकते है ।

परिवार हमारे ग्राम, समाज या राष्ट्र की इकाई है । अनेक परिवारो से मिलकर ही ग्राम, समाज या राष्ट्र का निर्माण होता है । अत. यदि परि-वारो मे शाति की स्थापना की जा सके, तो हमारा वहुत-सा काम सरल-सा हो जाता है । शाति की दिशा मे यह एक वुनियादी कदम होगा । परिवार मे शाति-स्थापना का काम तुलनात्मक दृष्टि से वडा सरल है । परिवार के सारे सदस्य एक तो स्नेह और आत्मीयता के सूत्र मे वधे हुए होते है, दूसरे उनके हित भी वहुत अशो मे समान ही होते है । परिवार मे जो झगडे पैदा होते है, वे प्राय उसके दो दलो के वीच होते है । इन दोनो दलों में से पहला दल उन व्यक्तियो का है जिनके पास अधिकार, सत्ता या शक्ति है अथवा यह कहिये कि जिनके कंधो पर परिवार के भरण-पोषण की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी है । दूसरा दल उन लोगो का है जो इस पहले दल के आश्रित हैं । कहने की आवश्यकता नही कि पहला दल अधिक सक्षम होता है । अपनी सक्षमता के कारण उससे आश्रित लोगों के हितो की उपेक्षा भी हो जाती है, उन्हें कम देकर अपने लिए ज्यादा रखने की प्रवृत्ति हो जाती है और यही से पति-पत्नी, भाई-भाई या पिता-पुत्र के झगडे प्रारभ हो जाते है । दूसरी ओर

अनेक बार आश्रित लोगो की ओर से भी झगड़े के वीज वो दिये जाते है। यदि पत्नी, वच्चे या छोटे भाई-वहन किसी दुर्व्यवहार या दुराचार के शिकार हो जाते है, परिवार की प्रतिष्ठा और मर्यादा भग करने लगते है, तो भी झगडा हो जाता है। हमारी मान्यता है कि झगडे का वीज चाहे पहले पक्ष ने वोया है चाहे दूसरे ने, शाति बनाये रखने के साधन पहले पक्ष के पास अधिक होते है। अतः उसे अपना सतुलन कायम रखकर न्याय-भावना का परिचय देना चाहिए। इससे लगभग आधे झगडे समाप्त हो सकते है। जिन झगडो मे पहल आश्रित लोगो की ओर से होती है या यो कहिये कि जिनमे उनका दोप प्रमुख होता है, उन झगडो मे पहले पक्ष को अधिक सतर्क और सावधान रहना चाहिए, क्योकि गुण और प्रतिष्ठा-वल चाहे पहले पक्ष के पास हो, परतु सख्या और सगठन-वल आश्रितो के पास अधिक रहता है। इस जनता-युग मे और लोकतान्त्रिक प्रणाली मे, सख्या और सगठन-वल को कम आकना उचित न होगा। पहले पक्ष का कर्त्तव्य है कि इस पिछले वल का उचित मार्ग-दर्शन करता हुआ, सहानुभूति और उदारता से उसके प्रश्नो और विवादो को हल करे। ऐसा न करके यदि सारा उत्तरदायित्व एक पक्ष पर ही डाल दिया जाय और परिवार के छोटे या आश्रित व्यक्ति अपने को उत्तरदायित्वहीन समझने लगे, तो वह भी शाति का एकागी प्रयत्न होगा और उसकी सफलता भी सदिग्ध ही वनी रहेगी। वहु-सख्यक लोग तो दूसरे दल के ही हैं। अत· जवतक उनमे वड़ो का आदर, श्रद्धा तथा अनुशासन की भावना नही होगी, शाति की बुनियाद मजबूत नही होगी। यदि किसी वात मे वड़ो से उनका मतभेद हो, तो उसे प्रकट करने का अधिकार उन्हे अवश्य होना चाहिए। लेकिन शालीनता विनम्रता और अनुशासन की उपेक्षा नही होनी चाहिए। बात यह है कि पारिवारिक शाति से हमारा मतलव स्मशान की शाति से नही है। जहा २-४ या ५-७ व्यक्ति रहते है, वहा मत, रुचि और स्वभाव का वैचित्र्य होगा ही, किंतु स्वपीडन, त्याग और उदारता ऐसी जीवित शाति का मार्ग प्रशस्त करेगे जो सवके लिए कल्याणकारी होगी। इसीलिए तो शाति-सेवा-दल का

आंदोलन अहिंसक समाज के निर्माण का आंदोलन है, जीवन के नवीन मूल्यो की स्थापना का आदोलन है। वह व्यक्ति, परिवार, संस्था या ग्राम को इतना शक्तिशाली, इतना पवित्र और इतना उज्वल बना देना चाहता है कि उनके आधार पर विश्व-शांति का महल वडी सरलता से वनाया जा सके।

संस्था परिवार का ही वडा रूप है। वहा या तो सत्ता और अधिकार पाने के लिए कार्यकर्ताओ के दो दल वन जाते है, या परिवार की ही भाति सत्ता एवं आश्रित लोगो के दो दल वन जाते है, पारिवारिक वंधन रक्त का होता है। रक्त की एकता वहा सवको एक वनाये रहती है, किंतु सस्था का संगठन उद्देश्य की एकता के आधार पर होता है। परिवार मे व्यक्ति की प्रधानता होती है, सस्था मे उद्देश्य या आदर्श की। अत. यदि स्वार्थ, अधिकार या सत्ता पर दृष्टि न रखकर आदर्श पर ही दृष्टि रखी जाय, उसीको प्रमुख स्थान दिया जाय, तो सस्था के वहुत-से झगडो का अंत किया जा सकता है। फिर भी मानव-स्वभाव की दुर्वलताओ के कारण कोई झगड़ा खडा हो ही जाय, तो उसको आत्म-निरीक्षण, स्वपीडन और परस्पर समझाव के द्वारा अच्छी तरह शांत किया जा सकता है।

हमारी दृष्टि मे सत्ता का केंद्रीकरण सस्था के विकास के लिए तो घातक है ही, शाति और सद्भावना के लिए भी घातक है। जव संस्था मे आदर्श का स्थान सर्वोपरि मान लिया जाता है, तो सत्ता या अधिकार का स्थान गौण हो जाता है। यद्यपि सत्ता और अधिकार के विना सस्था का सगठन कठिन हो जाता है और कुछ सीमाओं मे ही सही, उसकी आवश्यकता अवश्य रहती है तो भी ऐसी स्थिति वनाई जा सकती है जिससे सत्ता का स्थान प्रमुख न वनने पाये। इसका एक सरल और सूक्ष्म उपाय है विकेंद्रीकरण। जिन लोगो के पास सत्ता है, उन्हे अपने साथी कार्यकर्ताओं को वहुत-से अधिकार वांट देना चाहिए। इससे जहां अशांति या झगड़े का मूल कारण ही नष्ट होने लगेगा, वहा कार्यकर्ताओ की क्षमता और उत्तरदायित्व की भावना भी वढ़गी। गांधीजी के विचार मे विश्वास रखनेवाले लोग जिस प्रकार शासन-सत्ता मे विकेंद्रीकरण को नये समाज के निर्माण के लिए आवश्यक

समझते हैं, उसी प्रकार अब सस्थाओ मे इस विकेद्रीकरण को मूर्तरूप देकर शाति का मार्ग प्रशस्त बनाना चाहिए। अधिकार पाकर छोटे-से-छोटा कार्यकर्ता भी न तो निर्जीव यत्र की तरह काम कर सकता है, न काम की पवित्रता और उच्चता के प्रति ही उदासीन रह सकता है। फिर तो काम के साथ उसका अपनापन जुड जायगा, आदर्शो की अनुभूति भी उसे सदैव होती रहेगी, पारस्परिक झगडे की तो जैसे जड ही कट जायगी।

हो सकता है कि सत्ता के इस विकेद्रीकरण का कभी-कभी दुरुपयोग भी हो और छोटे कार्यकर्ता उसके द्वारा सस्था के आदर्श और अस्तित्व पर ही आघात करना प्रारंभ कर दे। अत इसमे सावधानी रखने की आवश्यकता तो है; किंतु हमारा विश्वास है कि विकेद्रीकरण के बाद इस प्रकार के अवसर कम आयेगे। वे जब भी उपस्थित हो, परिवार की ही भाति आत्म-प्रेरणा जाग्रत करके उन्हे मिटाना सर्वोत्तम होगा और उसका मार्ग है स्वपीडन। यह स्वपीडन व्यक्ति व सस्था दोनो मे तेजस्विता पैदा करेगा। इसकी आग मे तपने से स्वय व्यक्ति भी निखरे विना न रहेगा। वह दुधारी तलवार की भाति अपने और विपक्षी दोनो के ही कल्मशो पर समान रूप से चोट करेगा, दोनो की तेजस्विता बढायेगा।

शाति-स्थापना की दृष्टि से परिवार का बडा महत्व है। अत. विकेद्रीकरण के साथ ही पच-फैसले जैसे माध्यम का भी प्रवेश करना उचित होगा। इससे पारिवारिक बटवारे के झगडो से अदालतबाजी और दूसरे शाति-भग के अवसर कम हो जायेंगे।

ग्रामो मे जगह-जगह ग्राम-पचायते कायम हो रही है। ग्राम-न्यायालय भी बन रहे है। उनमें वही पद्धति डाली जाय जो विद्यालय के सिलसिले मे बताई गई है। शाति-स्थापना के लिए जो निवारक दल बने, वह देखेगा कि प्रत्येक परिवार और गाव मे भीतरी तथा बाहरी शाति का व ता‚वर रहे।

: ४ :

शांति-संगठन—१

शाति के विचार और सस्कार के बाद अब हम शाति-सगठन पर आते है। वैसे हर देश की सरकार की यह जिम्मेदारी होती है कि वह देश मे शाति-रक्षा करे, देश की व्यवस्था बनाये रखे, परंतु आज की सब सरकारे अत मे दंड या शस्त्र-बल से शाति-रक्षा करती है। जो व्यक्ति समाज के अपराध मे कानून द्वारा दडित होता है, उसे जुरमाना देना या जेल में जाना पडता है, जो उपद्रव और हिंसा-काड करते है, उनपर अततोगत्वा डडे और गोली की बौछार की जाती है। कोई भी सरकार यह नही चाहती कि उसे ऐसे अप्रिय कार्य करने पडे। मजबूरी की हालत मे ही सरकार या सरकार के जिम्मेदार अधिकारी इन हिंसात्मक साधनों का आश्रय लेते है। वे सब शाति चाहते है, शाति के साधनो से काम चल जाय तो उन्हे खुशी होगी, परंतु एक तो शाति के साधन उन्हे सूझते या मिलते नही, दूसरे सूझते और मिलते भी हो, तो उन्हे वे अव्यावहारिक, हवाई, आदर्श-जैसे लगते है। उनके तुरंत और तत्काल प्रभाव डालने की शक्ति पर उनका विश्वास नही होता। इन कारणों से वे दड और शस्त्र का आश्रय सहसा नही छोड सकते। हमारा काम है कि हम ऐसा वातावरण निर्माण करें, ऐसी भावनाओ को फैलाये, ऐसी प्रणालियो को सुझाये, ऐसे प्रयोग करे, जिससे उनकी कठिनाई दूर हो, उनका मार्ग सरल हो और उनका उत्साह बढे। यह बिना शाति-संगठन के नही हो सकता। सरकारी तौर पर यदि ऐसा शाति-सगठन किया जाय, तो आज उसका फल अनुकूल निकलने में सदेह है। सरकार पर अभी जन साधारण की ऐसी श्रद्धा नही हो गई है कि वह उसे बिल्कुल अपना व्यवस्था-मंडल मान ले। आज की सरकार व्यवहार मे बिल्कुल कल्याणकारिणी बन भी नही गई है। उसके महान नेताओ की यह इच्छा और प्रयत्न अवश्य है कि वह कल्याणकारिणी या मंगलमय बन जाय, परन्तु अभी तक जनता

और उनके प्रतिनिधि भी उसे अपने से भिन्न ही मानते है और उसके तथा उसके अफसरो और कर्मचारियो के कामो को शका और आलोचना की दृष्टि से देखते है, आत्मीयता और ममत्व की दृष्टि से नही। आज यदि सरकार कोई शाति-मडल स्थापित करे या शाति-दल खडा करे, तो फौरन लोग उसे एक सरकारी महकमा मान लेगे, और उसके प्रति उनके मन मे खास आदर या सद्भाव नही होगा। परतु यदि कोई गैर-सरकारी सस्था, सगठन या दल इसके लिए बनता है, तो लोगो की दृष्टि बदल जाती है। वे उसे अपनी चीज मानते है। अत' आज हम सिद्धातत भले ही माने कि शाति-व्यवस्था सरकार की जिम्मेदारी है, और सरकार को ही शाति-दल बनाना चाहिए, परतु आज वह उतना प्रभावकारी और शक्तिशाली न बन सकेगा, जितना गैर-सरकारी सगठन या दल। फिर आगे जाकर सर्वोदय की दृष्टि से हमे यदि शासन और शोषण का अत करना है, सरकार जैसी कोई चीज ही नही रखना है, केवल व्यवस्था-मडल रह सकेगा, तो फिर आज ही से गैर-सरकारी सगठन या दल क्यो न खडा किया जाय ? इससे दो लाभ होगे—एक तो यह कि सरकारी महकमे जैसा न रहने से लोगो के आदर और ममत्व का पात्र बनेगा, दूसरे यदि वह प्रभावकारी हो सका—उसके द्वारा शाति का वातावरण बन पाया, उसके निवारक और रक्षक दोनो दलो ने समय-समय पर प्रत्यक्ष शाति-स्थापना द्वारा अपनी उपयोगिता सिद्ध की तो, सरकार के लिए भी, जबतक वह कायम रहेगी, शस्त्र-दल की जगह इस शाति-दल को प्रतिष्ठित या अगीकृत करना आसान हो जायगा। इस बीच यदि सरकार-सस्था ही न रही, तो यह शाति-दल एक सर्वोदय का व्यवस्था-मडल बन सकेगा, या ऐसे मंडल बनाने मे उपयोगी और सहायक हो सकेगा।

अत हमारी राय मे फिलहाल गैर-सरकारी तौर पर इसका सगठन होना उचित होगा। अलबत्ता सरकार की दृष्टि इसके प्रति ममत्व की, सहानुभूति की और सहयोग की होनी चाहिए, क्योकि अततोगत्वा तो यह उसीकी सहायता का काम है। उसीके कर्त्तव्य का एक महत्वपूर्ण अंग है और जिस तरह भारत सेवक समाज, खादी-मडल, हरिजन सेवक सघ,

आदि को सरकार का अपनत्व मिल रहा है, वैसा ही इसे मिलना चाहिए। ऐसे शांति-संगठन या शांति-दल के लिए सरकार और सरकार के महकमे आज क्या-क्या कर सकते हैं—इसका विचार स्वतंत्र रूप से आगे करेंगे। यहां तो हम यह बताना चाहते हैं कि शांति-संगठन कैसे किया जाय।

मेरी समझ से उसका नाम 'शांति-स्थापक-मंडल' रहे। उसका उद्देश्य हो—भारत में तथा विश्व में शांतिमय स्थिति पैदा करना, जिससे समाज तथा सरकार को शांति-रक्षा के लिए शस्त्र या दंड-बल का आश्रय न लेना पड़े।

इसके लिए वह तीन प्रकार के काम करेगा:

(१) शांति के विचारों की श्रेष्ठता का प्रतिपादन और प्रसार।

(२) शांति के संस्कारों के आयोजन, शांतिमय जीवन के अनुकूल प्रणालियों, विधि-विधानों का सर्जन और प्रयोग।

(३) शांति-रक्षा के लिए प्रत्यक्ष शांति-दल की स्थापना।

पहले दो के बारे में हम पहले थोड़ा विचार कर चुके हैं। इस अध्याय में हम तीसरे—शांति-दल के बारे में विचार करेंगे।

शांति-दल के दो विभाग होंगे। एक निवारक, दूसरा रक्षक। निवारक-दल प्रयत्न करेगा कि गांव-कसबे तथा समाज में झगड़ा-फिसाद न होने पाये और होने की आशंका या संभावना का पता लगते ही फौरन निवारक उपाय काम में लाकर उनकी रोक-थाम करने का प्रयत्न करे।

यदि निवारक-दल झगड़े-फसाद को रोकने में असमर्थ हुआ, या असफल रहा, तो रक्षक-दल वहां पहुंचेगा और परिस्थिति को अपने हाथ में लेगा।

निवारक दल शांति के विचारों और शांति के संस्कारों संबंधी कार्यक्रमों के साथ पहला काम गांवों में अग्रलिखित प्रतिज्ञा-पत्रों पर नागरिकों के हस्ताक्षर प्राप्त करने का कार्य करेगा।

शांति-संगठन—१

प्रतिज्ञा-पत्र

संख्या . . ता० .

श्री अध्यक्ष महोदय,

शाति-रक्षक-दल

.. ... .

प्रिय महोदय,

वंदे । मै प्रतिज्ञा करता हू कि अपने निजी, स्थान, सस्था अथवा समाज और देश-सवधी झगडो को आपस मे, पच-फैसले से या अदालत के जरिये वैधानिक तरीके से तय कराऊगा, किसी भी दशा में उनके लिए मारकाट या हिंसा-उपद्रव का आश्रय नही लूगा ।

भवदीय,

पता . .. . (हस्ताक्षर). . . . ...

....

. .. .

इससे पहले निवारक और रक्षक दोनो दलो के स्वयसेवक या सैनिक नीचे लिखे प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करेगे ।

प्रतिज्ञा-पत्र

सख्या . . ता० .. ...

श्री अध्यक्ष महोदय,

शाति-रक्षक-दल

.. . . .

प्रिय महोदय,

वदे । मै . , ... शाति-रक्षक-दल का सदस्य हू । मै मानता हू कि समाज तथा देश की उन्नति और विकास के लिए सर्वत्र शाति और अभय का वातावरण रहना नितात अनिवार्य है । इस मान्यता की पूर्ति के लिए प्रतिज्ञा करता हूं कि जव कभी लडाई-झगड़े तथा हिंसात्मक उपद्रवो को रोकने का अवसर आयेगा, मै शातिमय साधन से उन्हें शमन

करने का प्रयत्न करूंगा और आवश्यकता हुई तो उसके लिए अपने प्राणों की आहुति देने के लिए भी तैयार रहूंगा।

भवदीय,

(हस्ताक्षर).... . ...

पता .. ..

....

नागरिको के प्रतिज्ञा-पत्र भरे जाने से दो लाभ होंगे—(१) एक तो वे स्वय शाति-भंग का अवसर न लायेंगे—(२) यदि दूसरे शाति-भंग करना चाहते हो, तो उन्हे भी अपने-आप स्वप्रेरणा से रोकने का प्रयत्न करेगे, क्योंकि स्वयं शाति के लिए प्रतिज्ञा-बद्ध है। उससे निवारक-दल का आधे से ज्यादा काम हो जायगा।

फिर निवारक-दल अपने कार्यक्षेत्र के, जो मेरी राय मे २५ मील घेरे से अधिक आमतौर पर न होना चाहिए, सपर्क मे रहेगा और ऐसी व्यवस्था करेगा कि अपने क्षेत्र मे लडाई-झगडे या फिसाद की सभावना होते ही उसे खबर मिल जाय और वह समय पर पहुचकर उसमें ध्यान दे सके तथा शाति-भग की अवस्था को बिगडने मे रोक सके। इसमें सरकारी तथा गैर-सरकारी सभी एजेंसियो का सहयोग उसे मिलना चाहिए।

इस दल मे दूसरी श्रेणी के कार्यकर्ता होगे—जिनकी तैयारी प्राण देने की होगी, पर जिन्हे सहसा प्राण देने की नौबत नही आयेगी। इसे आप प्रारंभिक दल भी कह सकते है। बुनियादी और रचनात्मक होने से इस दल के काम का बहुत अधिक महत्व है। यह काम समाज के मानस, स्वभाव, सस्कारो-प्रणालियों को बदलेगा, जिसका प्रभाव जीवन-व्यापी होगा। इस काम के बिना शाति-दल का आगे का—रक्षक रूप का—काम किसी हालत मे नही चल सकता।

लेकिन इस दल से शाति-स्थापना का भाव पूर्ण नही हो सकता। इससे तात्कालिक उपद्रवो और हिंसा-काडो का शमन नहीं हो सकता। अतः तबतक इस रक्षक-दल की आवश्यकता रहेगी जबतक समाज स्वतः

ही शाति-पथ पर न चलने लग जाय—कही कोई शाति-भग की आशका या सभावना ही न रह जाय। इसमे कितना काल लगेगा—यह आज कहना कठिन है। परंतु हमे तो आज की समस्या का हल ढूढना है। अतः हमे इस रक्षक-दल का निर्माण करना ही होगा।

: ५ :

शांति-संगठन—२

शांति-रक्षक-दल

रक्षक-दल मे ऊचे दरजे के, पहले नंबर के प्रतिष्ठित, प्रसिद्ध, सच्चे, समाज-सेवी, राष्ट्र-नेता, त्यागी, साधना-शील, संयमी व्यक्ति होने चाहिए जिन्हे हृदय से शाति प्रिय हो, शाति, सद्भावना, सहयोग, मानवता के लिए स्वपीडन और स्वमरण के अवसर आये तो उससे जिन्हें प्रसन्नता और उत्साह का अनुभव हो। भले ही ये थोडे हो—परंतु उन्हे समाज का काफी अनुभव होना चाहिए, जिनके नाम तथा उपस्थिति-मात्र से जनता पर प्रभाव हो, जिनका जीवन जनता में आत्मसात हो गया हो। मेरा खयाल तो यह है कि यदि भारत मे एक भी ऐसा दल बन जाय, जिसमे भले ही पाच उच्च कोटि के व्यक्ति हो, तो उसकी स्थापना, घोषणा या अस्तित्व-मात्र से शाति-रक्षा की दिशा में बडा प्रभाव पडेगा। एक ओर से भारत में और भिन्न-भिन्न राज्यो मे ऐसा रक्षक-दल बन जाता है तो इससे जो शाति का वातावरण निर्माण होगा, उससे दगो-उपद्रवो पर, ऐसी मनोवृत्ति पर, ऐसे तत्वो पर बडा सयमकारी-नियत्रणकारी प्रभाव पडेगा। रक्षक-दल दगो-फिसादो और उपद्रवो के अवसर पर जाकर काम करेगा। वह किस तरह करे, इसकी कल्पना इस प्रकार है.

खबर लगी कि फला जगह दगा-फिसाद होने जा रहा है, या हो रहा है। तुरत उस मौके पर यह खबर फैलनी चाहिए कि रक्षक-दल के लोग आ

रहे है। वे जरूरत हुई तो जान की बाजी लगाकर भी लोगो को फिसाद और हिंसा-काड से रोकेंगे। स्वभावत: दगे की जगह एकत्र लोगो मे एक हलचल मचेगी—वे भी दगे को न बढने देने का उपाय करेगे। अब दल के लोग आ पहुंचे—उनके आने का शाति के अनुकूल कुछ प्रभाव जरूर पड़ेगा। जो दंगे राजनैतिक या साप्रदायिक उन्माद के कारण हुए है या होगे, जो जान-बूझकर खडे किये गए है, या बढाये गए है, उन पर इनके आने का कम असर भी हो सकता है। यह भी सभव है कि उपद्रवी लोग और भी उत्तेजित होकर इन शाति के नेताओ पर हमला कर दे और उनकी जान चली जाय। इस प्रकार के उपद्रवो और हिसा-काडो का हम अलग से विचार करेगे। यहा तो हम रक्षक-दल के कार्यक्रम या प्रक्रिया की कल्पना देना चाहते है।

अच्छा तो रक्षक-दल ने पहुंचकर उनसे कुछ बातचीत प्रारंभ की और आगे जो प्रसगोचित व्यवहार उन्हे सूझेगा, जैसा उनका प्रसंगावधान होगा, वैसे वे उस परिस्थिति पर काबू पाने का प्रयत्न करेगे। पहले से उसका नियम-विधान बता रखना न सभव है, न व्यवहार्य है। दल के नेता के सामने इस समय दो मार्ग उपस्थित होते है—एक तो यह कि प्रत्यक्ष मोर्चे पर पहुचकर उपद्रव को शमन किया जाय, दूसरे उस स्थल से दूर रहकर उस पर नियंत्रणकारी प्रभाव डाला जाय। दल के नेता परिस्थिति को देखकर उसका निर्णय करेगे। यदि उन्हे यह प्रतीत हुआ कि प्रत्यक्ष मोर्चे पर शातिमय मुकाबला करने मे, उसकी प्रतिक्रिया मे, कम-से-कम तुरत अधिक उपद्रव बढने की संभावना है, तो वह उससे दूर रहकर उसको रोकने का उपाय करे। यह उपाय अनशन के द्वारा किया जा सकता है। वह यह घोषणा कराये कि जबतक यह दंगा शात न होगा, हम एक, दो, तीन जितने भी हो, अनशन करेगे। दगा शांत होने पर ही अन्न ग्रहण करेगे। भले ही इसमें उनके प्राण चले जायें। इसका असर जरूर होगा—वे सब शक्तिया और तत्व, जो शांतिप्रिय है, और जिनके मन मे उन रक्षक-दल के नेताओं या सैनिकों के प्रति आदरभाव और स्नेह तथा महत्व है, शांति की दिशा में काम करने के लिए खडे हो जायेंगे।

ऐसे दगे अंत मे तो शात होते ही है—खानगी या गैर-सरकारी प्रयत्नों के बावजूद, पुलिस-दल रहता ही है, और रहेगा ही, अंततोगत्वा वह उसे अपनी लाठी-गोली से शात कर ही देगा, परतु यह अनशन उस दंगे की प्रगति, वेग और बल को रोकने व कम करने मे जरूर मदद देगा। और यदि तात्कालिक प्रभाव कम हुआ, या न भी हुआ, तो बाद में उसका शातिकारी असर जरूर होगा। आगे के दगो का मार्ग उससे काफी कठिन हो जायगा।

अब आप यह कहेगे कि प्रत्यक्ष मोर्चे पर जाकर हमारे बडे बहुमूल्य नेता मारे गए या अनशन करके मर गए तो क्या होगा ? बावले, पागल, उन्मत्त मदाध लोगो के बीच इन नेताओ का जाकर अपनी जान झोकना वेवकूफी होगी। मै इससे सहमत नहीं। मै समझता हूं कि इस समय अनशन करके स्वपीड़न द्वारा या प्रत्यक्ष मोर्चे पर वलिदान द्वारा हम जो सेवा करेगे वह अनमोल होगी। उसका गहरा व स्थायी असर होगा। तुरंत ही होगा, तुरत नही तो कुछ ठहरकर अवश्य होगा। बल्कि जहां ऐसे बडे नेता मारे जायगे वहां कोई ताज्जुब नही, आगे कई वर्षों के लिए बडे दगे-फिसाद ही वद हो जायें या रुक जायें। उनकी आहुति से लोगो के मन और हृदय वदल जायेंगे और वे अवश्य शाति की तरफ झुकेगे। नेता तो वलिदान देकर अमर हो ही जायेगे, पर उस क्षेत्र मे भी शाति के अमिट वीज बो जायेगे। और हमे बड़े तथा प्यारे नेताओ के ऐसे बलिदान के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। वेशक पहले हम मरेगे—बाद मे उनको मरने देंगे। लेकिन उनकी मोर्चे पर जाकर मरने की तैयारी हम तिनको मे भी हाथी का बल ला देगी—हम जैसे सैकडो को अपनी जान देकर उपद्रवो को शमन करने अपने तथा प्यारे नेताओ की जान वचाने की अमिट प्रेरणा देगी। यह उस बलिदान का ऐसा-वैसा असर नही माना जा सकता। शस्त्र-युद्ध में जव हमारे बडे जनरल और कमाडर मारे जाते हैं, और हम उनके मर जाने में गौरव अनुभव करते है तो उससे अधिक ही प्रेरणा व प्रभाव इन शातिप्रिय वलिदानो का होगा। जो हिंसा-काड और उनसे संवधित जघन्य घटनाएं देश में होती रहती है, उन्हें रोकने के लिए हम जैसे

सैकडों का और कुछ बड़े नेताओं का बलिदान कोई बड़ी चीज नहीं समझा जाना चाहिए। उससे भयभीत या चिंतित होने का कोई प्रश्न ही नही है—वह दिन हमारे लिए एक स्मरणीय तथा प्रेरणादायी और स्फूर्तिदायी दिन होना चाहिए।

दगा पुलिस-वल से शात हुआ हो या अहिंसा-वल से, उसके अंत के बाद इस दल को, जिसमे अब निवारक-दल भी शामिल हो सकता है, फिर शाति के विचार और शाति की भावना का प्रचार करना चाहिए। शाति के प्रतिज्ञा-पत्रो पर दस्तखत कर भिजावाये तथा और प्रकार भी काम लाये। दगे मे जिन-जिनकी जान-माल की हानि हुई हो, उसकी जिम्मेदारी दंगाइयो पर डाली जाय, उसके परिमार्जन और मुआवजे का प्रबध किया जाय। इस तरह दगाइयो से गैर-सरकारी तौर पर प्रायश्चित्त कराया जाय।

इसमे हम यह स्पष्ट कर देना चाहते है कि हम सरकार से यह नही कहते कि वह आज ही पुलिस-बल को हटा दे, और अकेला शाति-दल ही काम करे। अंत मे तो हम पुलिस-वल का स्थान इसी शाति-दल को देना चाहते हैं। चाहे सरकारी, चाहे गैर-सरकारी तौर पर—पाच साल मे इस शाति-दल को इतना सुसगठित, मुस्तैद, कार्यकारी हो जाना चाहिए कि जिससे सरकार को वर्तमान सशस्त्र-पुलिस-बल की आवश्यकता ही न रहे; परतु जबतक समाज मे ऐसा शातिमय वातावरण नही बना लिया जाता, या शांति-दल प्रभावकारी और कार्यकारी नही हो पाता, तव तक हम पुलिस-वल को हटाने की सलाह न देगे; अलबत्ता सरकारी पुलिस-बल के साथ एक सरकारी निवारक शाति-दल जोडा जा सके तो विचार करने योग्य जरूर है।

: ६ :

युद्ध-निवारण

अबतक तो हमने देश की भीतरी शांति-रक्षा की दृष्टि से मुख्यत: विचार किया। यह मान भी ले कि प्रत्येक देश ने भीतरी शांति-व्यवस्था

इस तरह करली कि उसे उसके लिए शस्त्र-बल की आवश्यकता नही रही, तो भी अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे युद्धो का प्रश्न बना ही रहता है। उसे कैसे हल किया जाय ?

यदि सब देश भीतरी व्यवस्था में हिंसा-बल से मुक्त हो जाते है, तो उसका बहुत बडा नियत्रणकारी और संयमकारी प्रभाव अतर्राष्ट्रीय युद्ध-समस्या पर पड़ेगा। आज भी पचशील के प्रचार के कारण शाति के अनुकूल वातावरण तो सभी देशो मे पैदा हो रहा है; परतु अभी उसकी गति भाषण, लेख, प्रस्ताव-वक्तव्य, ठहराव से आगे नही बढी है। यह प्रारभिक और बुनियादी काम अवश्य हुआ है, उसकी आवश्यकता थी और अब भी है, परतु हमने देख ही लिया है कि मिस्र और हगरी के मामले मे एक ही झटके मे हमारी कई साल की खडी की गई इमारत ढहने लगी थी। अतएव हमें इस दिशा मे कोई प्रत्यक्ष काम करके, सगठन करके पचशील के काम को मजबूती देनी चाहिए। इसका एक ही उपाय है—शाति-सेना! स्वेज-नहर के मिस्री प्रश्न पर ही हमने अनुभव कर लिया कि अतर्राष्ट्रीय पुलिस-बल का अधिक महत्व है। राष्ट्रीय सैन्य को अपने-अपने राष्ट्र या देश का सहयोग और विश्वास अर्थात नैतिक बल प्राप्त होता है—जबकि अंतर्राष्ट्रीय पुलिस-बल को सभी राष्ट्रो का। वह सभी राष्ट्रो की अर्थात विश्व की अपनी चीज हुई। अर्थात हम व्यापक सहानुभूति—व्यापक ममत्व की दिशा में आगे बढे। हम विश्व या मानव-भावनाओ मे प्रगति पथ पर चलने लगे। यह हमारे विकास का आगे का कदम है। परतु यह पुलिस-बल भी शस्त्र-बल पर आधारित रहा। इसे हम शाति-दल मे परिणत करने की दृष्टि से विचार करे, क्योकि आज एकबारगी कोई नि.शस्त्र शांति-सेना राष्ट्रीय स्तर पर बनाना भी मुश्किल होगा। तो क्या यह अंतर्राष्ट्रीय पुलिस-बल नि शस्त्र बनाया जा सकता है ?

गहराई से विचार करेगे तो इस पुलिस-दल के पीछे शस्त्र का उतना बल नही है, जितना राष्ट्रो की परस्पर सद्भावना, अर्थात शाति-प्रियता का नैतिक बल है, क्योकि भिन्न-भिन्न राष्ट्रो की सेना को लड़ने न देने—शस्त्र

चलाने से रोकने के लिए इस दल का प्रादुर्भाव हुआ है । इसका काम जितना रक्षक है, उतना मारक नही । नाम को ही, धाक को ही शस्त्र उसके हाथ मे है, ऐसा कहे तो अत्युक्ति न होगी । अब यदि उससे शस्त्र हटा लिये जाते है, तो क्या नुकसान होगा ? वैसे भी उसके हाथ मे मामूली शस्त्र रहते हुए भी, यदि सवधित राष्ट्रो की सरकार न माने या सशस्त्र-सेना से चढाई कर दे, तो यह मुट्ठी-भर पुलिस-वल क्या कर लेगा ? अत: इसके पीछे जो सवका नैतिक वल है वही प्रधान है, शस्त्र-वल विल्कुल ही नाम का है । इस नैतिक वल को अधिक वढाकर, यदि हम यह निश्चय करे कि एक ऐसा अतर्राष्ट्रीय सैन्य खड़ा किया जाय या इसी पुलिस-वल को नि॰शस्त्र वना दिया जाय जो युद्ध में लीन या लिप्त या उसकी तैयारी मे लगे हुए राष्ट्र या राष्ट्रो को चुनौती दे कि यदि उन्होने कही आक्रमण किया त। उन्हे पहले इस शाति या नि.शस्त्र दल का मुकावला करना पड़ेगा, अर्थात उस नि:शस्त्र दल या सेना को कत्ल करके या मार के ही वह आगे बढ़ सकेगा । यदि सामने एक सशस्त्र सैन्य है तो दूसरे सशस्त्र सैन्य के लिए उसका मुकावला आसान है । आज उसे कोई वुरा न कहेगा, भले ही मन मे वह अच्छा न लगे, पर आज के नियम, कानून, विवान के अनुसार वह जायज माना जायगा । परतु यदि कोई नि:शस्त्र दल या सेना सामने है, तो सशस्त्र सैन्य के अधिकारियो को एक वार सोचना तो पडेगा । यह सोचने लगना ही उनकी मानसिक हार का सवूत है । नि शस्त्र पर शस्त्र कैसे चलायें---चलायें या नही---यह प्रश्न, यह हिचक ही उनकी राष्ट्रीयता के ऊपर मानवता, शस्त्र-वल पर नैतिक वल की महत्ता की घोपणा करती है । यह हिचक, यह मानवता या नैतिकता का प्रभाव उन्हे शस्त्र चलाने के वजाय, प्रस्तुत प्रश्न का निपटारा दूसरे शातिमय नि:शस्त्र तरीके से करने की ओर प्रेरित करेगा । इसमे से समझौते का कोई मध्यम मार्ग निकल आयेगा । यह शाति या नि.शस्त्र सेना की विजय हुई---महज उसके अस्तित्व मात्र से, या मरने की तैयारी मात्र से ।

अव आप कहेंगे---यह क्यो मान ले कि वह सशस्त्र-सेना हिचकेगी । उसका काम तो नि:शस्त्र सेना के मुकावले में बड़ा आसान हो जायगा ।

एक ही झटके मे, एक ही हमले मे, उस सेना का काम तमाम करके वह सेना अपना लक्ष्य सिद्ध कर लेगी। जो शस्त्र लेकर विजय के लिए चलता है वह क्यो इतना नैतिकता का, मानवता का विचार करने लगा ? यही असली प्रश्न है, असली दिक्कत है, जिसको हल किये बिना हमको इसमे आगे बढना कठिन है।

इसमें हमारा निवेदन यह है कि अब पहले की तरह सशस्त्र-सेना और सशस्त्र-सेना के अधिपति या सचालक, या शासक महज पशुबल या शस्त्र-वल पर आधार रखनेवाले नही रहे। लोक-कल्याण की तथा लोकतत्र की भावनाए सभी देशो और राष्ट्रो मे प्रबल हो रही हैं। वहा के सामाजिक, राष्ट्रीय, राजनैतिक सभी संगठन इन भावनाओ को महत्व दे रहे हैं और बौद्धिक स्तर पर सभी लोग हिंसा के मुकाबले में अहिंसा की श्रेष्ठता को मान गए हैं। अब यह तर्क या बौद्धिक विवाद का विषय नही रहा—व्यवहार्य—या अव्यवहार्य—सरल या मुश्किल की श्रेणी मे आ गया है। अत: यदि कही ऐसे नि:शस्त्र दल या सेना का प्रयोग किया जाता है, कही कोई ऐसा दल खडा करता है, तो जगत के नेता आज उसका स्वागत ही करेगे, उसे सहयोग तथा बल देने की ही इच्छा रखेंगे। यदि हमारा विश्व के या अतर्राष्ट्रीय जगत के मानस का यह अवलोकन सही है, तो फिर पूर्वोक्त शका, दलील या कठिनाई अपने-आप हल हो जाती है। सिर्फ इतना ही सवाल रह जाता है कि कौन माई का लाल, व्यक्ति या राष्ट्र इसके लिए आगे कदम बढाये ?

निश्चय ही इसमे सबसे पहले सबकी निगाह भारत पर ही पडेगी। ठेठ वेद और उपनिषद से लेकर नही, बुद्ध-महावीर-अशोक की परपरा से ही नही, हाल के गाधी-नेहरू-विनोबा तक का एक ही सदेश सर्वोपरि है—शाति-शाति-शाति:। नेहरूजी को उसके पहले का 'ॐ' शब्द शायद अनावश्यक मालूम पडे, परतु यदि उनकी समझ मे यह बात आ जाय कि ॐ शब्द विश्व की महान-से-महान व्यापक शक्ति का सूचक है, तो वह भी मानेगे कि 'ॐ शाति:-शाति:-शाति:' यह मत्र, यह सदेश भारत को ईश्वरी देन है, और

आज भारत, इसी पूर्व पीठिका, परंपरा, या विरासत को लेकर विश्व मे पंच-शील की प्रतिष्ठा करने मे सफल हुआ है । अतः आगे के शाति-सैन्य के लिए ससार के राष्ट्र उसीकी ओर आख लगाये वैठे, तो क्या आश्चर्य है ? और कोई वैठे या न वैठे—भारत इसपर विचार क्यो न करे ? उसका अपना यह दायित्व है—ऐसा क्यो न समझे ? अहंकार के प्रभाव से नही, विश्व-कल्याण और विश्व-भावना की वृद्धि तथा सिद्धि की दृष्टि से—सेवा और सुधार के खातिर ।

भारत मे आज वापू के पुण्य, नेहरू के प्रताप और विनोबा के तप से कम-से-कम आतरिक शाति की दिशा मे तो ऐसा वातावरण वन ही गया है कि शाति को लोग व्यवहार्य कोटि मे मानने लगे है । यहा कई सगठन, समाज, सस्थाए ऐसी है, कई धर्म-सप्रदाय ऐसे है, जो महज शाति के ही लिए पैदा हुए है और शाति के ही लिए जीते है । हमारे राष्ट्रीय नेता, हमारे शासन-सूत्र-सचालक सव शाति के पुजारी है । हमारे विनोवा और अब तो साधु-समाज भी इसके लिए उठ खडा हुआ है । जैन-वैष्णव-ईसाई तो पहले से ही शातिप्रिय है—वे इस आयोजन का सबसे पहले स्वागत करेगे । क्या ही अच्छा हो कि विनोवा तो भारतीय शांति-सेना का और जवाहरलालजी अंतर्राष्ट्रीय या विश्व-शाति-दल का झडा अपने हाथ में ले सकें और हमारे राष्ट्रपति भारत में और भारत की ओर से ऐसे दल की विधिवत घोषणा का श्रेय और गौरव प्राप्त करे !

मुझे इस नाते दूर भविष्य में ऐसी ही श्रद्धा है, जैसीकि इन महान नेताओ के व्यक्तित्व के प्रति है । मै जानता हू कि यह काम महान नेताओ और प्रभावशाली व्यक्तित्व का है । अतएव उनतक अपनी पुकार पहुचाकर, उनका दरवाजा खटखटाकर, इतनी-ही अपनी शक्ति मानकर आगे बढता हूं । इतना मै अवश्य जानता और मानता हू कि ऐसे दल और सेना खड़ी करने का समय आ पहुचा है ।[1]

---

१. इसके बाद पूज्य विनोबा ने शांति-सेना खड़ी करने का जो आयो-जन किया है, उससे यह विश्वास पुष्ट ही हुआ है ।

: ७ :

सरकार और शांति-दल

उत्तम या आदर्श समाज-व्यवस्था कैसी हो—इसके बारे मे अबतक कई प्रणालिया चली, नये प्रयोग हुए, नये-नये आदर्श सामने आये। भारतवर्ष में हजारो वर्षों तक वर्णाश्रम प्रणाली चली। अब वह जर्जरित हो रही है। उसमें एक मुखिया के आश्रित घर की, समाज की, राज की व्यवस्था होती थी। शुरू मे मुखिया चुना जाता था, बाद मे वह स्वाधिकार से, जन्म-सिद्ध अधिकार से मुखिया हो गया, जो राजा कहलाया। वह अक्सर क्षत्रिय होता था, ब्राह्मण उसके मत्री होते थे। राजा शासन भी करता था और रक्षण भी। भीतरी शाति की और बाहरी आक्रमणो से राज्य, समाज या देश की रक्षा करने की उसकी जिम्मेदारी थी। वह सेना और शस्त्रास्त्र द्वारा रक्षा करता था। अब एक राजा की जगह हमने प्रजा का राज स्थापित किया। अब समाज-व्यवस्था और रक्षा की सारी जिम्मेदारी प्रजा अर्थात जनता पर आ गई। अब भी मुखिया होता है, परतु वह प्रजा का चुना हुआ होता है। अब भी सेनाए है। प्रधान मत्री अपने म त्रिमडल मे एक प्रतिरक्षा मत्री रखता है और एक गृह मत्री रखता है। प्रतिरक्षा मत्री सैन्य के द्वारा देश की रक्षा करता है बाहरी आक्रमणो से, गृह मत्री भीतरी शाति की रक्षा करता है पुलिस-बल से, आवश्यकता पडने पर वह सैन्य-बल की भी मदद लेता है।

भारत में हमने व्यक्ति-सत्ता-प्रधान व्यवस्था का अंत करके समाज-सत्ता-प्रधान व्यवस्था कायम करने की घोषणा की है। अर्थात हम चाहते है कि समाज मे प्रत्येक व्यक्ति को अपनी उन्नति और विकास का समान अवसर और समान अधिकार मिले। इसी तरह हमने लोकतत्र को स्वीकार करके चाहा है कि समाज की व्यवस्था प्रजा की सम्मति से चले। ये दो बड़े क्रातिकारी परिवर्तन हुए है। इससे हमे सारी समाज-व्यवस्था ही बदलनी होगी। व्यक्ति-आश्रित जितनी प्रणालिया थी, वे सब हमे समाज-

आश्रित बनानी होगी। व्यक्ति की सत्ता या मुखिया की मर्जी से जो काम चलते थे, वे अब सामूहिक सत्ता और जनता की मर्जी से चलाने होंगे। हमारे सामाजिक रस्म-रिवाज, जाति-पाति की प्रणाली, अर्थ-व्यवस्था, श्रम-व्यवस्था, शासन-पद्धति, सबमें आमूल परिवर्तन करना होगा। समाज-सत्ता-प्रधान आदर्श होने से हमे व्यवस्था मे विकेंद्रीकरण लाना होगा। प्रजा की सम्मति अनिवार्य होने से, प्रजा-प्रतिनिधियो का चुनाव करना होगा—चुनाव-प्रणाली डालनी होगी। विकेंद्रीकरण का अर्थ हुआ जो अधिकार या सत्ता एक व्यक्ति मे निहित थी, वह तमाम बालिग व्यक्तियो को सौप दी गई। प्रतिनिधि-निर्वाचन का अर्थ हुआ जहा एक व्यक्ति की सम्मति काफी थी, वहां तमाम बालिग व्यक्तियों की सम्मति की आवश्यकता हुई। तमाम बालिग व्यक्ति तमाम समाज का काम कैसे करेंगे? तो उनके प्रतिनिधियो पर उसका भार आया। यही से चुनाव प्रणाली का जन्म हुआ। प्रतिनिधि कैसे चुने जायं, क्या उसकी विधि हो—इसका बडा शास्त्र और विधान बनाना पड़ा। इस तरह हम देखते है कि समाज-प्रधानता और प्रजासत्ता दोनो के सम्मेलन का एक यह निश्चित अर्थ हुआ कि हमारा प्रत्येक व्यक्ति व्यवस्था चलाने की क्षमता, कार्य-व्यवस्था देने की बौद्धिक और नैतिक योग्यता रखता हो। अर्थात पहले जहा एक या कुछ व्यक्तियो के योग्य और सक्षम होने से काम चल जाता था, वहां अब प्राय. प्रत्येक बालिग व्यक्ति को कायिक, वाचिक, मानसिक—सब दृष्टियो से योग्य बनने की आवश्यकता हुई।

इस तरह हमें प्रत्येक व्यक्ति को एक अश तक स्वावलंबी और बाद में परस्पराश्रित बनाना पड़ेगा। स्वावलंबी बनाने के लिए स्व-श्रम की प्रतिष्ठा बढानी होगी और परस्पराश्रय के लिए सहयोग की भावना। लोकतन्त्र-शासन में प्रत्येक नागरिक का महत्व है; उसी तरह शाति-स्थापना की जिम्मेदारी प्रत्येक नागरिक की है। अत. हमे प्रत्येक नागरिक को उसकी जिम्मेदारी बतानी और समझानी होगी। शाति-भंग की अवस्था में शाति-रक्षा के लिए उसीको जिम्मेदार ठहराना होगा, शाति-रक्षण-की योग्यता

और क्षमता उसमे लानी होगी। इस दृष्टि से हमारी शिक्षा-पद्धति, राज्य-व्यवस्था, पुलिस तथा सेना-पद्धतियो में परिवर्तन करना पडेगा । अभी हमने इसपर बहुत कम विचार किया है । अपनी पचवर्षीय योजनाओ मे अभी हमने प्रारभिक आर्थिक उत्पादन आदि समाजिक प्रश्नो को ही हाथ मे लिया है । बेशक हमने शाति का वातावरण पैदा किया है—विश्व मे पचशील की भावना फैलाई है, परंतु अभी प्रत्यक्ष शाति-रक्षक प्रणालिया नही ली हैं, न तो हमने छोटे-बडे सार्वजनिक और राजनैतिक झगडो को निपटाने के लिए पच-फैसले की प्रणाली डाली है, न प्रत्यक्ष दगे या युद्ध को रोकने के लिए शाति-सेना का ही बीजारोपण किया है । इसलिए हमारा सुझाव है कि भीतरी शाति-रक्षा की दृष्टि से भारत सरकार एक कमीशन बैठाये जो इस बात की जाच करे कि मौजूदा अदालत-प्रणाली की जगह पच-फैसला या सशस्त्र पुलिस-दल की जगह नि.शस्त्र पुलिस-दल कायम करने का समय आ गया है या नही, यदि हा तो उसके क्या उपाय है, यदि नही तो वह स्थिति कैसे लाई जा सकती है ? इसी तरह अतर्राष्ट्रीय युद्ध को रोकने के लिए सयुक्त राष्ट्र सघ मे नि॰शस्त्र सैन्य खडी करने की आवश्यकता पर विचार किया जाय । नि शस्त्रीकरण की ओर तो प्रगति के चिह्न दिखाई देते है, परतु कही-न-कही प्रत्यक्ष नि शस्त्र सैन्य खडा होना चाहिए—वह कहा हो, यह भी सोचना चाहिए ।

लेकिन जबतक भिन्न-भिन्न राज्यो की सरकारे अपने भीतरी मामलो में नि॰शस्त्र पुलिस और अतर्राष्ट्रीय युद्धों के लिए नि शस्त्र सैन्य बनाने की स्थिति में न हो, तबतक यह उचित और आवश्यक मालूम है होता है कि गैर-सरकारी तौर पर शाति-दल कायम किये जाय और सरकार उनकी हर तरह मदद करे ।

अब हम इस प्रश्न पर विचार करेगे कि यदि गैर-सरकारी तौर पर शाति-दल खडा किया जाता है, या किया गया है, तो उसे आज की सरकारे किस हद तक, किस तरह सहायता या सहयोग दे सकती है ।

१. इसमे मेरा पहला सुझाव तो यह है कि भारत सरकार अपने

तथा राज्यो के गृह-मन्त्रियो को यह हिदायत दे कि दंगे-फिसाद को रोकने के लिए—निवारक उपायों पर बहुत ज्यादा जोर दे—डडे या गोली का आश्रय पुलिस उसी अवस्था मे ले, जब वह प्रारभ के तमाम निवारक उपायों से काम ले चुकी हो। हर गोलीवार के बाद केवल अदालती या महकमी जाच ही काफी नही है; यह भी इत्मीनान गृह मत्री करले कि गोली चलाने के पहले तमाम निवारक उपाय पुलिस कर चुकी थी या नही। यदि नही कर चुकी थी तो उससे जवाब तलब किया जाय...यह उसकी नालायकी या नाकामयाबी समझी जाय और ऐसा मानकर उसके खिलाफ उचित कार्रवाई की जाय। इसी तरह जो गृह मत्री, या पुलिस के आला अफसर या तो दंगे को बढ़ने ही न दें, या बढने पर बिना गोली चलाये उसे रोक दे—उनकी तारीफ—वाह-वाही की जाय, उनकी पीठ ठोकी जाय, उनकी तरक्की की जाय। सरकार उन्हे बता दे कि गोली चलाने का अधिकार होते हुए भी, हम नही चाहते कि गोली चलाकर दंगे शात किये जायं। निवारक उपाय कौन-कौन से हो सकते है, मौजूद निवारक उपाय काफी न हों तो नये कौन से कदम उठाये जा सकते हैं—इसके लिए एक कमेटी बैठाई जाय—मौजूदा परिपाटी, उपाय, नियम या जाब्ते पर ही संतोप न मान लिया जाय। जो गृह मत्री इस दिशा में समय पर उचित कार्रवाई नही करते हैं, उनकी कमी और खामी समझी जाय।

२. दूसरे तमाम सरकारी एजेंसियां दंगे की संभावनाओ, झगडे-फिसाद को पैदा करनेवाली परिस्थितियो की सूचना फौरन से पेश्तर अपने उच्च अफसरो को तथा शाति-दल के सयोजको को दें। अपने-अपने महकमे के अपनी-अपनी जिम्मेदारी के काम करते हुए भी, उन तमाम एजेंसियों का यह विशेप कर्तव्य करार दिया जाय कि वे शाति-रक्षा का ध्यान रखें और छोटे-बड़े लडाई-झगडे जो मारपीट और दंगे-फिसाद का रूप धारण कर लेते हैं—उन्हें वहीं रोक देने का प्रयत्न करे। वरिष्ठ अधिकारी उनसे भी जवाब-तलब करे और पूछें कि इस दशा में उन्होने क्या-क्या किया है—और जो नहीं किया है तो क्यो ?

३. सरकार अपने तमाम कर्मचारियो को यह जाहिर करदे कि सरकार हर तरह शाति चाहती है और शाति-भग करनेवालो को चोर, डाकू और खूनी से कम मुजरिम नही मानती। अतएव किसी भी राज-कर्मचारी के परिवार मे से कोई कही भी शाति-भग करता हुआ—या दगे-फिसाद में भाग लेता हुआ पाया जायगा, तो उस कर्मचारी से जवाब-तलब किया जायगा। हरएक कर्मचारी देखे कि उसका कोई आश्रित व्यक्ति कही भी दगे-फिसाद मे दिलचस्पी न ले,और यदि लेता हुआ पाया जाय, तो उसे रोकने और मना करने का प्रयत्न करे। उसके पास अपनी बचत का इतना मसाला होना चाहिए कि हर शख्स यह मान सके कि उसकी तमाम कोशिशो के बाव-जूद उसका आश्रित दगे-फिसाद में पडा। पडने के बाद उसने उनके खिलाफ क्या कार्रवाई की—इसका हिसाब भी उसके पास होना चाहिए।

४. सरकार ने कितनी ही संस्थाओ, सगठनो, सघो, कपनियो, आदि को मान्यताए दे रखी है। उन मान्यताओ के कारण उन्हे सरकार से तरह-तरह की सुविधाए-सहायताए प्राप्त होती है। सरकार से सबधित कई महकमे जैसे पी० डब्ल्यू० डी०, शिक्षा, स्वास्थ्य, आदि है, जिनसे कई गैर-सरकारी व्यक्ति तरह-तरह से लाभ उठाते है। उन सब पर सरकार यह नियम लागू करे कि यदि वे या उनके आश्रित दगे-फिसाद मे लिप्त पाये गए तो उनकी मान्यता का उस पर असर पडेगा। अपनी मान्यता देने मे सरकार शाति-रक्षा की एक आवश्यक शर्त भी पहले से रख सकती है।

विद्यालयो, मजदूर-सघो पर इस दृष्टि से खासतौर पर निगाह रखी जाय और उनका सहयोग प्राप्त किया जाय।

५ गैर-सरकारी शाति-सगठनो को सरकार आर्थिक सहायता दे। उसके सैनिको और स्वयसेवको के प्रशिक्षण मे अपने कर्मचारियो के तथा उनके अनुभव से लाभ पहुचाने की व्यवस्था करे। अलग और स्वतत्र रहते हुए भी सरकार का ममत्व इनके साथ हो। दल के सैनिक जब गावो में या दगे के स्थानो मे पहुंचे, तो सरकारी एजेसिया उन्हें स्थान, खान-पान, वाहन आदि सब तरह की सुविधाएं पहुचाये। अपनी पुलिस या सेना के

आने-जाने की सुविधा करना जैसा उसका वैधानिक और नियमानुसार कर्त्तव्य है, वैसा ही वह अपना यह नैतिक कर्त्तव्य समझे। उसमे काम करनेवाले, या दगो में काम आ जानेवाले सैनिकों, दल-नेताओ का उचित सम्मान और गौरव करे—वे हर कही सरकारी कर्मचारियो के नजदीक सम्मान के पात्र समझें जाये। मारनेवाले दल से अधिक इस मरनेवाले दल की प्रतिष्ठा सरकार के मन मे रहनी चाहिए।

ये कुछ सुझाव है। इसके और भी मार्ग सोचे जा सकते है।

: ८ :

ऊपर का प्रयत्न

पाठको ने अबतक के विवेचन से देखा होगा कि हमने हर पहलू से, हर मोर्चे पर, अशाति को रोकने और शाति फैलाने के प्रयत्नों का विचार किया है। हिसात्मक प्रवृतियो को कही भी बढावा न मिले, ऐसे प्रसग आने ही न पाये, आने पर उनका मुकाबला किस तरह किया जाय—सरकारी और गैर-सरकारी दोनो स्तरो पर—यह हमने बताया। अब एक और ऊपर का उपाय बाकी रह जाता है। उसकी यहां चर्चा करेगें।

प्रत्येक नागरिक तक पहुचकर शाति प्रतिज्ञा कराने का कार्यक्रम हम ऊपर दे चुके है। शाति-सैनिक भिन्न-भिन्न क्षेत्रो को बाटकर उनमे काम करे। विद्यालयो में, गावो में, किस प्रकार काम किया जाय—यह भी बता चुके है। ये सब बुनियादी बातें हुई। लेकिन जब हम यह सोचते है कि आखिर ये दगे-फिसाद इन्ही पिछले कुछ वर्षो मे क्यो हुए? तो उत्तर मिलता है साप्रदायिक या राजनैतिक प्रश्नों को लेकर। गाव-गाव के, या ग्रामवासियो के, या नगरवासियों के घरेलू, व्यापार-व्यवसाय, जात-बिरादरी आदि आर्थिक या सामाजिक प्रश्नों को लेकर बडे दगे हुए हो—ऐसा दिखाई नहीं देता। कांग्रेस द्वारा स्वराज्य की माग के पुरजोर होने पर भारत में हिंदू-मुसलमानों के उपद्रव शुरू हुए। उसके पहले धर्म के नाम पर हिंदू-मुसलमान

उपद्रव या युद्ध हुए थे और होते रहते थे—बाद मे इनका उद्देश्य तो राज-नैतिक हो गया—रूप अलबत्ता साप्रदायिक रहा। इन दगो से बापूजी बहुत परेशान रहे—उन्होने शाति-दल बनाने का आयोजन भी किया था—परतु स्वराज्य प्राप्ति के बाद, खासकर राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशो के फलस्वरूप, जो दगे हुए वे साप्रदायिक नही, बल्कि राजनैतिक थे। भले ही बाद मे गुडो ने, उपद्रवी तत्वो ने उन्हे अपने हाथ में ले लिया—ऐसा कहा जाय, परतु उनका मूल राजनैतिक था और है। अत इस शाति-कार्य में देश के राजनैतिक सगठनो, साप्रदायिक तथा सामाजिक सस्थाओ के नेताओं, सूत्र-सचालको, प्रभावशाली व्यक्तियो से सपर्क स्थापित किया जाय। कम्युनिस्ट पार्टी को छोडकर भारत की सभी राजनैतिक पार्टिया शाति और लोकतात्रिक पद्धति से काम करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। हिदू महा-सभा, राम-राज्य-परिषद् जैसे पुराणपथी सगठन भी हिंसात्मक साधनो से काम लेने का समर्थन नही करते—भले ही युद्ध में या आत्मरक्षा के लिए शस्त्र चलाना जायज मानते हों, परंतु अपने सगठन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए शस्त्र का साधन उन्होने अपनाया नही है। ये जो दगे हुए है और होते है, इनमें प्राय सभी राजनैतिक दलो के लोग पाये जाते है। काग्रेसी भी इनसे वचित नही रहे है। मुझे पता नही है कि इन सब राजनैतिक दलो के नेता और सगठनो के अध्यक्ष तथा पदाधिकारी शाति-रक्षा मे इतने सावधान और तत्पर है या नही, जितने काग्रेस या प्रजा-समाजवादी-दल के है। यदि नही है, तो उन्हे होने की जरूरत है। दगा हो जाने के बाद इन सस्थाओ के अधिपतियो ने क्या इस बात की छानबीन की है कि उनके सदस्य तो कही इनमे भाग नही ले रहे है? यदि की है, तो भाग लेनेवाले के बारे में क्या कार्रवाई—अनुशासनात्मक—की, इसका भी हमे पता नही है। लेकिन यदि उन्होने ऐसा नही किया है तो यह सोचने की बात है। उन्हें जाग्रत होने और अपने कर्त्तव्य तथा संगठन के प्रति वफादार रहने की आवश्यकता है। इस तरह इन सभी राजनैतिक सगठनो को सचेत करने तथा इस दिशा में कार्य प्रेरित करने की दृष्टि से यह अच्छा हो कि उन सबके अध्यक्षो और

नेताओ का एक सम्मेलन बुलाया जाय---उसमे शाति के उसूलो, प्रणालियो, उपायो पर विचार करके सवकी सम्मति से एक घोषणा-पत्र जारी किया जाय, जिसमे खास करके यह प्रतिज्ञा रहे कि हम हर हालत मे शातिमय तथा लोकतात्रिक तरीके से ही अपने उद्देश्य की पूर्त्ति करेगे । ये घोषणाए लग-भग वैसी ही होगी जैसीकि पचशील के आधार पर भिन्न-भिन्न राष्ट्रों की ओर से वक्तव्य निकलते है । इससे दो लाभ होगे---एक तो सगठन के नेता खुद अपने सगठन के हित मे शाति-रक्षा के प्रति जागरूक रहेगे, दूसरे उनके सदस्यो और अनुयायियो पर एक नियत्रण रहेगा और उसके भग होने की हालत मे अनुशासनात्मक कार्रवाई की जा सकेगी । इन सारी वातो का असर यह होगा कि दगो की वाढ मे जरूर रुकावट पैदा होगी । अभी तो इस तरह हो रहा है जैसा शाति-रक्षा का कोई धनी-धोरी ही नही है । फकत एक सरकार और काग्रेस ही उसके प्रति जागरूक है । वास्तव मे देश की हर पार्टी, हर सस्था और सगठन की यह जिम्मेदारी है ।

तो अव यह परिषद या सम्मेलन कौन वुलाये ? मेरी समझ मे इस समय भारत मे तीन ही व्यक्ति ऐसे है जो इस काम को कर सकते है--जिनके वुलाने से यह सम्मेलन भली-भाति हो सकता है । एक हमारे मान-नीय राष्ट्रपतिजी, दूसरे विनोवाजी और तीसरे पडित जवाहरलालजी । राष्ट्रपति होने के कारण कुछ वैधानिक शिष्टाचार की या परपरा-सवधी कठिनाइयां इसमे वाधक हो, तो हम नही जानते । नही तो उनका देवोपम व्यक्तित्व इसमे वहुत सफल हो मकता है । विनोवा इसलिए इसके अधिकारी है कि वे धर्म, जाति, पक्ष, वय अधिकार---सवसे परे है, और इस दृष्टि से सर्वाधिक पात्र माने जा मकते है ।[1] हमारे पडितजी यद्यपि एक राजनैतिक

[1] हाल ही में 'ग्रामदान' के सिलसिले में पूज्य विनोवा के सान्निध्य में जो सर्वदलीय सम्मेलन हुआ, वह इस विषय मे भी सहायक सिद्ध हो सकता है । उसने शांति-स्थापना के लिए ऐसे प्रयत्नों का मार्ग सरल कर दिया है ।

पक्ष के नेता हैं, फिर भी मूलत. वह साधुमना है और अब तो वह राष्ट्रीय नही, अतर्राष्ट्रीय व्यक्ति वन गए हैं--शाति-स्थापना का काम विश्व मे वह पहले ही से कर रहे हैं--अत' वह अपनी इस भूमिका पर से सबको निमत्रण दें तो यह भी सब तरह उचित होगा। इन सुझावो के वाद यह काम किस तरह सपन्न हो--इसका निर्णय करना इन्ही महानुभावो पर छोडना उचित है। इसकी आवश्यकता और उपयोगिता के वारे मे मैं समझता हू किसीका मदभेद न होगा। इससे हम शाति की दिशा मे आगे ही वढेंगे--पीछे कदापि नही हटेंगे।

यह सम्मेलन कव वुलाया जाय ? अच्छा तो यह होता कि आम चुनावो से पहले यह उद्योग किया जाता, जिससे चुनावो का स्तर और ऊचा हो जाता। परंतु उस अवस्था मे यह सम्मेलन विनोवाजी के निमत्रण से होता, जिससे किसीको यह सदेह न होता कि चुनाव मे अपने पक्ष को प्रवल बनाने के लिए यह आयोजन किया जा रहा है। लेकिन अव तो चुनाव हो चुके है और सरकारें बन चुकी है। यह काम अव फौरन हाथ मे लिया जा सकता है जिससे अगले पाच साल सरकारो का काम भी अच्छी तरह हो और विकास तथा निर्माण की योजनाए भी जोरो से आगे वढाई जा सके।

इसी तरह समाचार-पत्रो के सपादको और संचालको का भी एक सम्मेलन वुलाया जाना चाहिए। समाचार-पत्रो मे अक्सर दगो के और वडे व्यक्तियों के अपमानित किये जाने के समाचार ऐसी सुर्खियो मे छपते हैं कि जिनसे लोगो में सनसनी और उत्तेजना तो फैल जाती है, परतु गुडो और उपद्रवकारियो के प्रति मन मे अरुचि नही उत्पन्न होती। चाहिए तो यह कि खुद उपद्रवकारियो को ग्लानि और लज्जा उत्पन्न हो--इस तरह मे ये समाचार अखवारों में छपे। उनका सहयोग लेने के लिए ऐसे सम्मेलन के द्वारा और भी प्रयत्न किया जा सकता है।

इसके साथ ही मजदूर और किसान-सघो, साप्रदायिक जमातो--जैसे अकाली-दल, मुस्लिम-लीग, महागुजरात या महापजाव समितियो के नेताओं का भी एक सम्मेलन अलग मे वुलाया जा सकता है। मतलव यह

कि केवल बुनियादी, शैक्षणिक या प्रचारक काम से संतोष न मानकर ऊपर के जिम्मेदार व्यक्तियो और नेताओ पर भी शाति-रक्षा का प्रत्यक्ष भार डालना परम आवश्यक है ।

: ६ :

शांति की साधना

जिसे हम समाज कहते है वह व्यवस्थित मनुष्यो का एक समूह मात्र है और उसे यदि भौगोलिक सीमा मे बाध देते है तो वही एक देश हो जाता है। कोई देश जब एक सविधान से अपना शासन, नियंत्रण, व्यवस्था करता है तो राष्ट्र कहलाता है । अर्थात सबकी इकाई मनुष्य या व्यक्ति है । अतः यदि हमे समाज के या राष्ट्र के लिए कुछ भी काम करना हो तो व्यक्ति को छोड़कर नही कर सकते, हमें जो कुछ भी क्रिया करनी है वह मुख्यतः व्यक्ति पर ही । इसी तरह यदि अपने देश या विश्व मे शाति का साम्राज्य कायम करना है, शातिमय जीवन बनाना है, तो पहले शाति की शिक्षा-दीक्षा देनी होगी—उसके मन मे शाति के सस्कार डालने होंगे—विचार और आचार दोनो से उसके चरित्र में शाति की प्रतिष्ठा करनी होगी, उसे शाति की साधना का मार्ग दिखाना होगा । अशाति जिन कारणो से पैदा होती है उन्हे निर्मूल करने, अशाति के कारण उत्पन्न हो जाने पर जिन सद्गुणो से वे प्रभावहीन या निर्मूल हो सकते है उनकी उपासना करने, की विधि बतानी होगी । हम पहले बता चुके है कि घर, संस्था तथा समाज मे अशाति के मुख्य कारण स्वार्थ-भेद, मत-भेद, स्वभाव-भेद, सस्कार-भेद होते हैं । पति-पत्नी, माता-पिता, मित्र, पडौसी सबके कुछ-न-कुछ वाजिब स्वार्थो मे भी भेद रहता ही है । कहते है मां बेटी को ज्यादा चाहती है, बाप बेटे को ज्यादा प्यार करता है । यदि हम इसे एक स्वाभाविक या छोटी बात मानकर तूल नही देते है तो कोई झगडा नही होता; यदि हम इसी बात का बतंगड बनादे, तो बात-की-बात मे दोनो में मनमुटाव और

झगडा हो सकता है। इसी तरह जमीन-जायदाद पर बाप-बेटो का हक होता है। परंतु बाप उसे अपनी मानने लगे, बेटा अपनी समझने लगे तो विरोध पैदा हो जाता है। इसी तरह सस्था और समाज की भी बात समझ लीजिये। प्रकृति भेदमयी है। परमेश्वर एक है। एक परमेश्वर मे भेद की अवस्था उत्पन्न होना ही प्रकृति के प्रादुर्भाव का लक्षण है। सृष्टि, मनुष्य, प्रकृति के अतर्गत है, उससे ऊपर वह शरीर के रहते हुए शरीर रूप म नही उठ सकता। प्रकृति के प्रभावो से वह अपने को जीवित रखते हुए सर्वथा नही बचा सकता। एक उदाहरण लीजिये--मनुष्य और पशु का, स्त्री और पुरुप का। यह भेद प्राकृतिक है, शरीर से तो अभीतक इस भेद को कोई नही मिटा सका, दोनो के शरीर को नजदीक लाकर अलबत्ता समाज और राष्ट्र के नेताओ ने दोनो मे सामजस्य लाने का--मेल बिठाने का यत्न किया है। उससे हम एक-दूसरे के बहुत नजदीक आये है, पति-पत्नी के रूप मे अपने को जन्म-जन्मातर के लिए एक-दूसरे के साथी मानने लगे, माता-पिता, गुरु, अतिथि देवता हो गए, गाय माता हो गई, यह सब प्राकृतिक भेदो को निर्बल बनाने--परस्पर विघातक न होने देकर परस्पर हितकारक सहयोगी बनाने--की परिपाटी या प्रक्रिया हुई। इससे मनुष्य-जाति ने बहुत लाभ पाया--उसका विकास हुआ। सो यह जो सामजस्य की, एकता की, सहयोग की, प्रेम की भावना है, यह मनुष्य और जीव-मात्र मे परमेश्वर का, परमात्मा का अश है, परमात्म-तत्व का प्रभाव है। इस तरह भेद मे से एकता लाने का यत्न करना परमात्म-शक्ति की प्रेरणा है। भेद प्रकृति की और एकता या अभेद परमात्मा की देन या प्रेरणा या स्वभाव है। इसका अर्थ यह हुआ कि भेदो को विरोध का रूप लेने देना प्रकृति से नीचे जाना है, भेद को एकता, सहयोग की तरफ ले जाना प्रकृति से ऊपर, परमात्मा की तरफ जाना है। प्रकृति से नीचे जाना अधोगति है, प्रकृति से ऊपर उठना उर्द्ध्वगति है। दोनो दशाओ मे हमारा शरीर हमारा ही शरीर रहेगा, परतु हमारी भावनाओ मे फर्क पड जायगा, दृष्टि मे अंतर आ जायगा। विरोध की दिशा

मे चलेंगे तो हम आसुरी शक्तियो के प्रभाव मे जायेंगे, सहयोग, अभेद, एकता की दिशा मे गमन करेंगे तो दैवी कक्षा की ओर प्रवृत्त होंगे। कहने का मतलब यह कि भेद को भेद तक रहने देना एक बात है, उसे विरोध बना लेना दूसरी बात है। भेद से एकता उत्पन्न करना एक बात है, भेद मे से विरोध और बखेड़ा उत्पन्न करना दूसरी बात है। भेद मे से विरोध लाते है तो हम नीचे गिरते है, भेद की सीमाओ को समझकर उन्हे स्वाभाविक रूप मे रखते है तो हम जहा-के-तहा रहते है, यदि हम भेदो को महत्व न देकर सहयोग की भावनाओ को बढाते है तो ऊपर उठते है। अतः पहले तो हमें इस बात को समझ लेने की आवश्यकता है, अर्थात प्रकृति और पुरुष के स्वभाव व कार्य को जानना चाहिए और भेदो को विरोध मानने या बनाने की गलती से बचाना चाहिए; इतना ही नही, बल्कि उसे गौण या निर्बल बनाने और परस्पर सहयोगी बनाने का यत्न करना चाहिए। मतभेद को विरोध मानने से अशाति, मतभेद को एकता तथा सहयोग की भावना से मिटाने से शाति स्थापित होती है।

यह कैसे हो? परस्पर भेदो का समाहार करने की प्रक्रिया का नाम अहिसा है। प्रकृति को मानना सत्य को पहचानना है, परतु प्रकृति से ऊपर उठने का प्रयत्न करना अहिसा की साधना है। अहिसा की साधना से जब हम प्रकृति से परे उठ जाते है, तो प्रकृति की मूलगत एकता—परमेश्वर—के दर्शन होते है, जो सृष्टि और विश्व का परम सत्य है। इसीलिए बापू ने कहा है कि अहिसा की साधना के बिना सत्य के दर्शन नही होते। मनुष्य के जीवन की सिद्धि के लिए अहिसा के द्वारा सत्य तक, प्रकृति से परमेश्वर तक, अशाति से शाति की ओर, जाना आवश्यक है। जीवन की पकड़ सत्य में और जीवन का विकास अहिसा मे है। दोनों की साधना से मनुष्य अपने तथा समाज के जीवन मे शाति की स्थापना और प्रतिष्ठा कर सकता है।

अतएव मेरी राय मे और सब बातो को, साधनो को छोड़कर, मनुष्य को हम सत्य और अहिसा का—सत्याग्रह का—साधक बनायें, तो शाति की

समस्या अपने-आप हल हो जायगी । इस साधना के बिना हम अपने जीवन, घर, सस्था, समाज मे से अशाति को नही हटा सकते । सत्य हमे निर्भय बनाता है, अहिंसा हमे सहयोगी बनाती है । सत्य से हममे दृढता आती है तो अहिंसा से मृदुता, दोनो का मेल है—मनुष्यता । पशु-जगत मे हिंसा का प्रभाव पाया जाता है, मनुष्य-जगत मे अहिंसा का । सृष्टि मे हिसा भले ही हो, मनुष्य-समाज मे वह नही रह सकती । सृष्टि का काम भले ही अहिंसा के अस्तित्व-मात्र से चल जाता हो, परतु मनुष्य-समाज का काम अहिंसा के प्रभाव और प्रतिष्ठा के बिना एक मिनिट नही चल सकता ।

अतः हमे सत्य और अहिंसा की अहर्निश साधना करनी चाहिए । इसका सरल उपाय है यह दृढ सकल्प करना कि हम न किसीसे डरेंगे, न किसीको डरायेंगे, न किसीसे दबेंगे, न किसीको दबायेंगे । इससे बढकर शाति-साधना दूसरी नही हो सकती । इसके कुछ सरल सूत्र हम यहा अपने अनुभव से और दे देना चाहते है ।

(१) जहा तक बन सके, दूसरो के साथ सहिष्णुता का ही नही उदारता और आदर का व्यवहार करना—कम-से-कम अन्याय और प्रतिहिंसा की भावना हरगिज न आने देना, अर्थात परस्पर आदर भाव ।

(२) सहृदयता और सदयता का व्यवहार करना—कम-से-कम क्रूरता और अमानुषता से बचना, मानवीय भावो को अपनाना, अर्थात मानवता ।

(३) प्रेम और विश्वास रखना—कम-से-कम द्वेप, अविश्वास और सदेह का शिकार न होना, अर्थात विश्वासशीलता ।

(४) सदैव परमार्थ की भावना रखना—कम-से-कम स्वार्थ-साधु होने से अपने को बचाना । दूसरे शब्दो मे प्राणि-मात्र के प्रति मंगल भावना रखकर, उसीसे प्रेरित होकर जीवन के सब कर्म करना, अर्थात मागल्य श्रद्धा ।

इसके लिए आगे लिखे श्लोक का स्मरण बहुत सहायक होगा ।

मंगलं भगवान् विष्णुः मंगलं गरुड़ध्वजः ।
मंगलं पुण्डरीकाक्षो मंगलायतनो हरिः ॥

कम-से-कम इसका अतिम चरण 'मगलायतनो हरि:" अर्थात "भगवान मंगलमय है, यह विश्व भगवान का मगल रूप है" निरंतर स्मरणीय है।

(५) विपत्ति, संकट, भय या खतरे को निमंत्रण तो न दे, परतु आता हुआ देखकर उसका स्वागत करे, निश्चितता और सावधानी से उसका सामना करे—कम-से-कम धैर्य न खोये, घबराये नही; अर्थात धैर्य ।

(६) मत-विरोध और स्वार्थ-विरोध की अवस्था मे तीसरे आप्तजन द्वारा उसका निर्णय कराना, उसके लिए अभद्र, अशिष्ट, हिंसात्मक साधनो से काम न लेना; अर्थात पच-फैसला ।

आशा है, ये संकेत पाठको को शाति-साधना में सहायक होगे । यदि हम यह साधना करते है तो फिर शाति-संगठन का काम आसान हो जाता है और आगे चलकर वह अवस्था आ सकती है जिसमे हमारा शाति का संगठन अनावश्यक हो जायगा—शाति मनुष्य और समाज का स्वभाव बन जायगी। उस दिन को शीघ्र लाने के लिए हम भगवान से प्रार्थना करे। वह दिन सर्वोदय की स्थापना और सिद्धि का दिन होगा ।

"ॐ शातिः शातिः शाति."

परिशिष्ट

शांति-सेना का लक्ष्य और शांति-सेना की योग्यताए
रचनात्मक सस्थाए और शांति-सेना
शांति-सेना और कुछ प्रश्न
शांति-सेना प्रश्नोत्तर

: १ :

शांति-सेना का लक्ष्य और शांति-सैनिक की योग्यताएं

(विनोबा)

बीमारी मेरे लिए बहुत दफा प्रसाद होती है। हर बीमारी मे हम यही अनुभव आया कि मेरे चित्त की एकाग्रता पराकाष्ठा तक पहुच जाती है। मुझे एकाग्रता सहज सधती है, परतु बीमारी मे जो एकाग्रता होती है—मैंने चाडील मे भी देखा, उसके पहले भी देखा और इस बार केरल मे भी देखा कि वह करीब-करीब समाधि-कोटि मे आ जाती है और उसमे मुझे नये विचार सूझते है।

जैसे रामदास स्वामी को एक दर्शन हुआ था कि आगे क्या होगा, वैसे ही मुझे लगा कि ग्रामदान तो हो चुका, अब ग्रामराज्य के रक्षण की चिंता करनी चाहिए। तो हमे हनुमान की याद आई। रामकाज हो चुका, अब रक्षा के लिए हनुमान चाहिए। देश मे जो ग्रामराज्य बन चुका है, उसकी रक्षा के लिए शाति-सेना बननी चाहिए। मैंने हिसाब लगाया कि पाच हजार मनुष्यो की सेवा के लिए एक शाति-सैनिक चाहिए, अर्थात पैंतीस करोड की सेवा के लिए सत्तर हजार सैनिक खडे करने चाहिए।

शाति-सैनिक की योग्यता मे सत्याग्रही लोकसेवको की जो पचविध निष्ठा है, वह तो चाहिए ही, उससे कुछ अधिक भी चाहिए। उससे कम मे काम नही चलेगा। लोक-सेवक किसी राजनैतिक पक्ष का सदस्य नही होना चाहिए। इस विषय मे बहुत चर्चा होती है। निष्कामता की शर्त लोगो को चुभती नही है, यद्यपि वह इतनी कठिन है, कि मुझे लगता है कि इसके वास्ते रात-दिन 'गीता' की ध्वनि सुनाई देगी, तब होगा। पर

उसकी लोगो को इतनी चिता मालूम नही होती । उनको चिता यह होती है कि पक्षातीतवाली बात उचित है या अनुचित ! लश्करी परिभाषा म भी यह मान्य है कि सिपाही सबका सेवक होना चाहिए, इसलिए सत्याग्रही लोक-सेवको की प्रतिज्ञा मे सब पक्षो से मुक्त होने की जो बात है, वह शाति-सैनिक के लिए अत्यत आवश्यक है । हमारा शाति-सैनिक जातिभेद-निरपेक्ष होना चाहिए, सब धर्मो को समान माननेवाला होना चाहिए, क्योकि ऐसा नही होता है, तो अशाति का बीज उसीमे पड़ा है । इसी तरह वह पक्षतीत भी होना चाहिए, यह बात ध्यान मे आनी चाहिए ।

छठी निष्ठा : अनुशासन

पहले की पचविध निष्ठाएं शाति-सैनिक मे चाहिए ही, उसके लिए एक और छठी निष्ठा रख दी है और वह एक अद्भुत ही वस्तु है—कम-से-कम विनोबा के लिए, कि शाति-सैनिक को सेनापति का आदेश मानना ही चाहिए। अभीतक हम शासन-मुक्त समाज, विचार-स्वातन्त्र्य की जो बात बोलते आये है, उससे बिल्कुल भिन्न ही नही; बल्कि विपरीत-सी यह बात भासित होती है । शाति-सेना और बातों मे तो दूसरी सब सेनाओ से बिल्कुल विरुद्ध ही है, परंतु अनुशासन के बारे मे उनसे कम सख्त नही हो सकती, कुछ अधिक ही हो सकती है, क्योकि उसमे दूसरो का प्राण लेने ही की सहूलियत नही है । अपने हाथ मे शस्त्रास्त्र पड़े होने पर भी प्राण खोने का मौका तो आता है, इसीलिए वहा शौर्य है और इसीलिए उसका गौरव भी है । सशस्त्र सेना का प्राचीन काल से आजतक जो गौरव है, वह इसीलिए है कि उसमे प्राण खोने का भी मौका है । उतना ही शौर्य का अश उसमे है, इसलिए उसका गौरव है । पर उसके साथ प्राण लेने का भी उसमे माद्दा है, सहूलियत है, तैयारी है, योजना है । यहा तो बिल्कुल ही एकागी बात हो गई कि हमे अपना प्राण खोने की बात और दूसरो के प्राण बचाने की बात है । कोई तलवार से अगर हमारे गले पर प्रहार करता हो, तो अपने गले पर प्रहार न हो, यह तो अपने को चिता होनी ही नही चाहिए, पर प्रहार करनेवाले के हाथ को किसी प्रकार की चोट न लगे, यह भी चिता

होनी चाहिए । यहा बिना अनुशासन के नही चलेगा। सेवको को कमाडर का कमाड मानने की आदत पडनी चाहिए । आदेश हो कि "रुक जाओ", तो तुरत रुक गम, सोचने की बात ही नही, ऐसी आदत पडनी चाहिए, तब काम होगा ।

माता की भांति सबकी सेवा

शाति-सेना हमेशा की सेवा-सेना होगी । 'शाति-सेना' गाधीजी का शब्द है। वह भी महसूस करते थे कि शाति-सेना हमेशा के लिए सेवा-सेना रहनी चाहिए । जगह-जगह जो अशाति हो, वहा हम पहुच जाय और अपना जीवन अर्पण करे । इस प्रकार से वह चीज निकली। परतु शाति-सैनिक इस प्रकार से नही बनता है । वह वही हो सकता है, जो मातृवत् सबका सेवक होगा । 'मातृवत्' शब्द का मैने बहुत सोच-समझकर प्रयोग किया। मा बच्चो को कठिन प्रसग मे जैसे बचाती है, वह अद्भुत ही है । किसी शेरनी का बच्चा पकड लिया जाता है, तो वह किस तरह टूट पडती है, बावजूद इसके कि वह जानती है कि सामने बंदूक खडी है, उससे वह खत्म होनेवाली है। उसकी तृप्ति तब होती है, जब वह गोली का शिकार बनती है और समझ लेती है कि बच्चे के लिए उसे जो करना चाहिए था, वह उसने किया । शाति-सेना का तत्त्व यही है । शेरनी चाहती है कि बच्चे के छीननेवाले को मै फाड खाऊ । वह सर्वोदय-विचार की तो माननेवाली नही है। अपने शिशु के बचाव का विचार उसके मन मे है । वह उद्यत है मारने के लिए, मरने के लिए भी, बल्कि मरने तक वह कोशिश करती है और मरने के बाद ही उसका प्रयत्न समाप्त होता है । हमारे सेवको मे जो शाति-सैनिक बनेंगे, उनमे स्वाभाविक ही ऐसी प्रवृत्ति होनी चाहिए कि हमारे समाज मे कही भी खतरा पैदा हो, तो जैसे माता बच्चे की रक्षा के लिए दौड जायगी, उसी तरह शाति-सैनिक भी दौड जायेंगे । उसमे उसे अपनी रक्षा का कोई खयाल ही नही आयेगा । शाति-सैनिक मुख्यतया सेवा-सैनिक होगा ।

सेना का आध्यात्मिक आधार

हमारी सरकार जो सेना बनाती है, उसका आध्यात्मिक और भौतिक आधार क्या है ? उसका आध्यात्मिक आधार है, लोगो का प्राप्त किया हुआ 'वोट'। अन्यथा उसमे और लूटनेवाली टोली मे कोई फर्क नही। लेकिन वोट का आधार वहुत ही क्षीण है। किसी भी देश मे, जहां लोक-तात्रिक ढाचा है, वहा तीस फीसदी वोट से चुने हुए लोग सौ फीसदी पर सत्ता चलाते है। जो नही चाहते है, उनपर अगर मै सेवा लादू, तो वह एक अजीव-सी बात हो जायगी। पर आज जो लोग नहीं चाहते हे, उन पर सेवा नही, सत्ता लादने की बात है और इस आधार पर सेना वनती है। ऐसा माना जाता है कि जनता का वोट उसका आधार है।

'सम्मति-दान' की मांग

हमारी शाति-सेना के पीछे कोई आध्यात्मिक आधार चाहिए। सिवाय इसके कि हम करुणाप्रेरित है और सेवा करना चाहते है, इससे अधिक कोई आध्यात्मिक आधार हमे मान्य नही। यह ठीक है कि इस तरह से सेवा करने का सवको अधिकार है, परतु शाति-सैनिक होकर मै सवकी सेवा करना चाहता हू और विना आपकी सम्मति से मै सेवा करू, तो मेरे पांवो में ताकत नही आयगी। मुझे सर्वानुमति से वोट चाहिए, ऐसी वात मै नही कहता। पर आम समाज की, जिसकी मै सेवा करना चाहता हू, उसकी सम्मति हमने नही ली। आज काग्रेस, पी० एस० पी० आदि के पीछे कुछ जनता है। आपके-हमारे पीछे या सर्वोदय का काम करनेवालो के पीछे क्या है ? यह पूछने पर मेरे जैसा मनुष्य कह देता है कि हमारा यह सकल्प विश्व-सकल्प है। जहा निर्मल, शुद्ध सकल्प होता है, वहां वह विश्व-सकल्प वन जाता है। यह कहने का हमारा अधिकार है, पर लोगों मे जाकर हम सिर्फ मर मिटे, इतनी तो हमारी आकाक्षा है नही। अपेक्षा यह है कि हमारी उपस्थिति का लोगो के दिलो पर ऐसा असर पडे कि जिससे शाति बने। तो इस प्रकार न सिर्फ सेवा का अधिकार वल्कि लोगो के दिलों पर नैतिक प्रभाव डालने का हम जो अधिकार चाहते है, उसके लिए, लोगों की

तरफ से कोई सम्मति होनी चाहिए । हमको रक्षक का अधिकार देनेवाला वोट हम आपसे नही मागते, वल्कि हमारा कार्य आपको पसद है, इस वास्ते आप कुछ करेंगे, ऐसी प्रतिज्ञा का निदर्शक सम्मति-दान हम आपसे मागते हैं । सूत की एक गुडो या उसका पर्याय-रूप कोई चीज—जैसे नारियल हमे दे, तो हम समझेंगे कि हमारे कार्य के पीछे जनता का आध्यात्मिक वल, उसकी सम्मति है । हमारे लिए भौतिक आधार क्या है ? शांति-सैनिक जिनकी सेवा मे लगेगा, उन सब घरो से उसके लिए सम्मति के तौर पर हर महीने कुछ-न-कुछ मिलता रहेगा । आपको कुल भारत मे इस तरह फैल जाना है । नेताओ ने जो सहिता वनाई है, उसने हम पर जिम्मेदारी डाली है कि हम हर गाव मे फैले ।
(निवेदक-शिविर, मैसूर, २६-६-५७)

: २ :

रचनात्मक संस्थाएं और शांति-सेना

सर्व-सेवा-सघ के सामने हमने वात रखी है कि तुमको तो सारे भारत में विल्कुल फैल जाना है और वह फैल जाने का कर्त्तव्य, नेताओ ने जो सहिता वनाई उसमें आता है । यह मेरा उस सहिता का भाष्य समझ लीजिये । एक भाष्य तो मै कल की सार्वजनिक सभा मे कर चुका हू और आज यह दूसरा भाष्य आप लोगो के सामने रख रहा हू । अ० भा० ग्रामदान-परिषद् के वक्तव्य की सहिता कह रही है कि कम्युनिटी प्रोजेक्ट के काम का सहयोग होना वाछनीय है । इसका अर्थ आप क्या समझे ? यह सहिता आपको हिदायत दे रही है कि कम्युनिटी प्रोजेक्ट पाच लाख गावो मे फैलनेवाला है । तो कल वह कम्युनिटी प्रोजेक्टवाला अधिकारी आपके सामने आयगा और पूछेगा कि क्या आपके सुझाव है । इसपर आप क्या यह कहेगे कि हमारा तो वहा मनुष्य ही नही है ! तो उस सहिता के आदेश का पालन आपने नही किया । उनके साथ आपने सहयोग नही किया । यह कहना कि हमारा कोई

आदमी वहा नही है, यह कोई सहयोग है। जितने गावो मे वे फैले हैं, उतने गांवो मे आपको फैल जाना चाहिए तब तो सहयोग होगा। हम चाहते हैं कि कुल गाव ग्रामदानी बनें। यह न हो, तो भी उसकी हवा जरूर फैले और जो कम्युनिटी इत्यादि योजना चले, उस योजना पर सर्वोदय का रग हो। सब दूर कम्युनिटी प्रोजेक्टवाले फैले हों और हम सब दूर न फैले हो, तो उस हालत में हमारा उन पर क्या रग चढेगा ? वे कहेगे हम मानते थे कि ये सर्वोदयवाले कुछ सहयोग कर सकेंगे लेकिन इनको कोई हस्ती नही है। थोड़ी कोरापुट मे है तो उतना सहयोग वहा पर मिला। इनके कुछ 'पाकेट्स' हैं, लेकिन सर्वत्र हमको उनका सहयोग नही मिल सकता। इस वास्ते इस सहिता ने हम पर जिम्मेदारी डाली है कि हम हर गाव मे फैले और उसका यह तरीका है कि ग्रामराज्य हो चुका है, ऐसा हम समझकर चले। ग्रामदान का और ग्राम-निर्माण का कार्य भी जारी रहेगा, परतु ग्राम्यरक्षण के लिए शाति-सेना जरूरी है और उसका आधार है सम्मतिदान। सम्मतिदान याने कार्यकर्ताओ के लिए पैसा या द्रव्य हासिल करने की युक्ति नही। वह हम उसी हिस्से में चलायेंगे जहा कि हम शाति-सेना की योजना बनायेगे। नही तो हम घर-घर जाकर मागेंगे, तो उसमे शक्ति का अपव्यय होता है। वह नाहक मांगना है। सक्रिय काम करने के लिए प्रतिज्ञा हमने नही मागी है। हम तो इस सम्मति-दान को यह अर्थ देना चाहते हैं कि जिसने वह सम्मतिदान दिया, नारियल हमको दिया, उस शख्स ने प्रतिज्ञा की कि आपके काम मे हमारा सहयोग होगा। आप काम नही करते, तो सहयोग काहे का मागते हो ? इसलिए जिस क्षेत्र मे ऐसा काम करना चाहते हैं, उस क्षेत्र मे वह सम्मतिदान की बात हम करेंगे और ऐसा क्षेत्र बनाते-बनाते सारे भारत को हम व्याप्त करेंगे।

मैंने कहा कि इसमे कमांडर की बात माननी होगी। श्रद्धेय सेनापति सैनिक और विशिष्ट क्षेत्र की सेवा-योजना—तीनो जहा मौजूद हों, वहां उस स्थान के लिए कोई कमाडर मिला है, तो उसकी कमाड माननी होगी।

सारे भारत की शाति-सेना के लिए भी कोई सुप्रीम कमांड चाहिए। यह परमेश्वर ही करेगा। जिस भाषा मे मै बोल सकता हूं, उससे दूसरी भाषा वोलने की ताकत मुझमे नही है। पर फिर मुझे लगा कि लक्षण यह दीखता है कि अखिल-भारत मे शाति-सेना के सेनापतित्व की जिम्मेवारी विनोवा को उठानी होगी। ऐसा लक्षण दीखता है और वैसी मानसिक तैयारी विनोबा ने करली है।

यह वात आप लोगो के सामने तो हमने रख दी। हमारे दूसरे मित्रो के सामने भी रखी है जो चिंतित भी है कि देश मे शाति कैसे वने। उसी दिशा में हमको तैयार होना है। उसके लिए क्या-क्या करना पडेगा, यह हमको नये सिरे से सोचना चाहिए।

इसके लिए मै जो सोचता हू उसके अनुसार करना यह पड़ेगा कि हमारी जितनी रचनात्मक सस्थाए है, उनका इस काम के लिए समर्पण हो जाना चाहिए--चाहे वे खादी का काम करती हो, चाहे अस्पृश्यता-निवारण का, चाहे नई तालीम का। जो खादी-सेवक शाति का सैनिक नही वनेगा, उसको हम हीन नही समझेगे, वह भी एक सेवक है। करे सेवा। परतु जो खादी-सेवक शांति का सैनिक बनेगा, वह खादी को जिंदा रखेगा। दूसरा सेवक खादी को जिंदा नही रखेगा, वल्कि खादी के जरिये स्वय जिंदा रहेगा। वह खादी का पालन नही करेगा, खादी उसका पालन करेगी। ऐसे भी लोग हमको चाहिए और वे समाज मे करोडो की तादाद मे है भी। आखिर हमने ज्यादा सेवक मांगे ही नही। देश में इन सत्तर हजार के अलावा जितने होगे, हमारे स्वामी है वे। उनकी हमको सेवा करनी है।

पर ये सत्तर हजार कहा से आयगे—यह जव हम सोचते है तो हमको पहला जो क्षेत्र दीखता है, जहा से चुनने का मौका हमको मिलता है और अपेक्षा रखने का अधिकार है, तो ये सारी सस्थाएं है। कभी-कभी ऐसा होने का सभव होता है कि अपनी अपेक्षा के क्षेत्र से अपेक्षा पूरी नही पड़ती है और अनपेक्षित क्षेत्र से अपेक्षा पूरी पड़ती है। इसीलिए तो ईश्वर को मानना

पड़ता है। अगर आपकी सब-की-सब अपेक्षा पूरी होती, तब तो ईश्वर की कोई जरूरत ही नही है, ऐसा होता। और हम कहते, "हम है और हमारी योजना है, पार पड जायगी!" परंतु कोई चीज है जरूर, जिससे कि हमसे योजना नही बनती है, उससे बनती है। इसलिए अनपेक्षित क्षेत्र मे भी ऐसे लोग हमको मिलते है। पहले हमको कोशिश तो अपेक्षित लोगो के क्षेत्र मे करनी चाहिए। ऐसी जितनी रचनात्मक सस्थाए है, कुल-की-कुल गाधी-जी के नाम से जितनी निकली है, वावा कहना चाहता है कि वावा का उन सब संस्थाओ पर अधिकार है। उनमे एक भी सस्था यह नही कह सकती कि वावा का अधिकार नही है। लेकिन फिर भी अधिकार कमवेशी होता है। वावा का जहा अधिक-से-अधिक अधिकार था, ऐसी एक सस्था का ग्राम-सेवा-मडल, गोपुरी, वर्धा का, हमने समर्पण करने का सोचा है। वंग आदि भूदान-कार्यकर्त्ताओ को कह दिया है कि तुम इस सस्था का चार्ज ले लो। सारे भूदान-सेवक विलकुल घर वार छोडकर काम में लगे हुए है। तुम उस सस्था का अधिकार ले लो और जिस तरह से उसको चलाना चाहते हो, भूदान-यज्ञ-मूलक रूप उसको देने के लिए, उसमे जो भी परिवर्तन करना चाहते हो, कर सकते हो। ऐसा हमने उनको अधिकार दे दिया है। तदनुसार कुछ चर्चा होकर इस संस्था मे परिवर्तन के लिए गुजाइश है, वह आगे होनेवाली है। पर जिस वक्त यह प्रस्ताव किया था, तब शांति-सेना की बात उस संस्था के सामने हमने रखी नही थी। वह हमारे मन मे थी। वह हम इधर कर रहे थे। सिर्फ इतना ही कहा था कि भूदान-मूलक (अब तो ग्रामदान-मूलक) ग्रामोद्योग-प्रधान शातिमय क्रांति के लिए यह सस्था समर्पण हो। लेकिन अब हम सोचते है कि विना शाति-सेना के अहिसात्मक क्रांति सभव नही है। तो वह शाति-सेना भी उस ध्येय के अदर आ ही जाती है। संस्थावाले जरा सोचे और निर्णय करे। जो शांति-सैनिक नही वन सकते है, वे अपना कुछ काम कर सकते है। कोई यह न सोचे कि और किसीको यह न सुझाया जाय कि तुम शाति-सैनिक बनो। आखिर यह तो बात ऐसी है कि "हरिनो मारग छे शूरानो"—तो अंदर से

सूझना चाहिए । हाथ मे तलवार हम दे सकते है, कि जाओ, मारने का साधन तुम्हारे पास दे दिया, मरने का मौका आया, तो राजी रहो । आज की पद्धति मे यह भी होता है कि राजी रहने की बात ही नही है । वह पीछे हटेगा, तो गोली से मारा जायगा । एक दफा अगर उसके हाथ में बंदूक देकर ढकेल दिया आदमियो मे, तो मरने का मौका आया । भागना रखा ही नही है उसके हाथ मे । वह सहूलियत ही नही रखी । वह पीछे हटेगा, तो लोगो की मार खायगा । इस वास्ते उसके सामने आल्टरनेटिव (विकल्प) यही है कि पीठ दिखाकर अपने लोगो की मार खाय, नही तो सामनेवालो की मार खाय । शौर्य को बिल्कुल 'मेकनाइज' (यान्त्रिक) कर दिया । शौर्य यान्त्रिक बन गया । ऐसी हमारी कोई हालत है नही । इस वास्ते इसमे सावधानी से कदम उठाये, यही अच्छा है ।

सैनिक सख्या कम मिले, यही अच्छा है । धीरे-धीरे वह वढेगी । ग्राम-सेवा-मडल हम इस काम के लिए अर्पण करना चाहते है, ऐसा उनको सुझाया । दूसरी भी सस्था ऐसी आयगी, जब यह ध्यान मे आयगा कि शाति-सेना की वहुत जरूरत है । रामनाथपुरम् और मदुराई जिलों में ग्रामदान की हवा बहुत फैली । क्या अब आप समझते कि है वहा ग्रामदान होगा ? मार-काट चल रही है, वहा ग्रामदान कैसे होगा ? जो बुनियादी वस्तु है वह है शाति, बुनियादी प्रेम, परस्पर प्रेम, वह शाति अगर नही रही, तो प्रेम का उत्कर्ष जिसमे प्रकट होनेवाला है, वह कैसे होगा ? इसलिए ग्रामदान वगैरा मृगजल सावित होगा । अव इधर हम केरल मे घूमते थे, तो हमारी चिंता वढ रही थी पजाव के लिए । अपने देश के लिए यह वडी दुखदाई वात है । विल्कुल छोटी-सी चीज है । उसमें कोई सार नही है । एक लिपि की वात और वह भी ऐसी लिपि कि जिसमें एक-तिहाई अक्षर तो नागरी के ही है और दो-तिहाई मे से एक-तिहाई करीब-करीब नागरी की शकल के है; थोड़े-ही अक्षर भिन्न है । ऐसी लिपि, भापा का सवाल नही है, भापा तो सव जानते है—पजावी । तो वह कोई बड़ी वात नही है । परंतु अड़े है और हिंसा करते है । मदुराई मे हिंसा चली । किसी शहर

का कोई भरोसा नही रहा और शहरो का दिमागी अधिकार गाव पर चलता है। शहरों की बुरी हवा गांवो मे फैलाने की सुव्यवस्थित आयोजना का नाम है इलेक्शन। ग्रामदानी गाव इलेक्शन से कैसे बचे, इसकी चिंता कोरापुट-वालो को पड़ी है। गाव ग्रामदानी हुआ। अपना सब एक करेंगे यह तय किया। वहा जो वोट मागने के लिए आयगे और वे अगर आग लगा जायंगे, तो क्या किया जायगा ? इसलिए गावों का भी भरोसा नही रहा है। बिल्कुल ऐसी बेभरोसे की हालत मे हम कैसे ग्रामदान बनायगे ? एक क्षण में कुल-के-कुल ग्रामदान खतरे मे आ सकते हैं। इसीलिए शाति-सेना की बहुत जरूरत है। उसके बिना हम आगे नही बढ सकेंगे। इसलिए हम सबको सोचना पड़ेगा।

हमने कहा कि इसकी कमाड अब हमको हाथ में लेनी होगी, ऐसा लक्षण दीख रहा है। तदनुसार हमने आचरण भी आरभ कर दिया है। अभी केरल की राजम्मा ने हमको एक पत्र लिखा था और वह किस तरह काम करेगी, इसकी एक योजना सविस्तार बनाकर हमारे पास भेजी थी। हमने वह पढ ली। योजना बहुत अच्छी थी। स्वतंत्र रीति से देखा जाय तो उपयुक्त योजना बनाई थी। पर हमने दो लकीरो का पत्र लिखा कि आपका पत्र मिला। पर फिलहाल, हम लोगो का धर्म फलानी-फलानी जगह मे जाकर काम करने का ही है, ऐसा हम समझते हैं। बात खतम हो गई। उसके लिए कोई सबूत पेश नहीं किया, कोई दलील नही दी और वह बहादुर लडकी सीधे, जिस स्थान पर जाने के लिए कहा था, उस स्थान पर पहुंच गई। यहा आने के बाद उसको समझाया कि मै क्या चाहता हूं, उसके पीछे क्या विचार है। बुद्धि का विकास तो होना ही चाहिए। परंतु बुद्धि-विकास के फेर मे पडकर काम देरी से होने लगा, तो डिमोक्रेसी (लोकशाही) का अभिशाप सर्वोदय को प्राप्त होगा। "डिमोक्रेसी इज डिले।" वह डिमोक्रेसी के पीछे अभिशाप है। डिमोक्रेसी मे काम कभी त्वरित बनता नही। उसका स्पेलिंग ही 'डिले' है। ऐसे सर्वोदय का स्पेलिंग डिले हो जायगा ! काम नही बन पायगा। इस वास्ते यह नही होना चाहिए।

काम का जहा तक ताल्लुक है, वह पूरा करना चाहिए। फिर विचार के लिए स्वतत्र है। काम ठीक हुआ यह भी सोच सकते है और उसकी चर्चा भी कर सकते है। विचार-विकास के लिए हम दिमाग खुला रखे, परतु जहा हुक्म हुआ है, वहा जाना पडेगा। "हुक्म रजाई चल्लमा, नानक लिखया नाम।" नानक ने लिख दिया है कि नाम है उस हुक्म देने-वाले का, उसी हुक्म के अनुसार हमको चलना है।

(निवेदक-शिविर, मैसूर, २६-६-५७)

शांति-सेना और कुछ प्रश्न

निम्न प्रश्न पूछे गए है :

(१) शाति-सेना के बारे मे आपने जो कल कहा, वह जचा नही। आज तक हमने आपसे विचार-शासन के साथ कर्तृत्व-विभाजन की बात सुनी थी, अब आचार-नियमन की सुनी, तो क्या कर्तृत्व-विभाजन और आचार-नियमन एक ही है?

(२) कल आपने सुप्रीम कमाड की बात कही। वह शाति-सेना के बारे मे ही कही है। कुछ भावी कार्यक्रम के बारे मे नही कहा, ऐसा मुझे लगा। परतु हममे से कुछ लोगो के बोलने से ऐसा डर लगता है कि सारे काम मे सुप्रीम कमाड लेने की वृत्ति हमारी हो जायगी, यद्यपि आपकी वह देने की नही है।

(३) क्या शाति-सेना मे लेफ्टीनट, सक्सेसर्स (उत्तराधिकारी) का सवाल भी कमाड के साथ जुड जाता है?

(४) क्या हिंसक घटनाओ का सामना करने के लिए, केंद्रीकरण आदि जिन दोषो ने उन हिंसक घटनाओ को पैदा किया, उसी प्रकार की केंद्रित पद्धति हमे अपनानी होगी? हमें अहिंसक ही क्यो न हो, पर वैसी सेना ही बनानी होगी?

क्या सेनापति अपने-आप ही हो जाता है या सब लोग मिलकर उसे बनायंगे ? आपके भाषण मे आपने भगवान का नाम लिया, वही मुझे, 'सेविंग ग्रेस' मालूम हुआ। मुझे उम्मीद है कि भगवान आपको सेनापति नही बनायगा।

उत्तर—आपने बहुत अच्छे सवाल पूछे है। अगर कल के व्याख्यान के बावजूद और बाद भी ऐसे सवाल उपस्थित नही होते, तो हम समझते कि हमारे सामने कोई 'डेड मैटर' (मुर्दा वस्तु) खड़ी है।

अंतिम साध्य

हमने शासनमुक्त समाज का ध्येय सामने रखा है। जहां शासनमुक्त समाज आयगा, वहा वह शाति-सेना-मुक्त भी होगा। उसमे सेवक-वर्ग होगा। एक-एक स्थान मे हर घर के लोग, किसी सूरत से कोई गलत बात बनी, तो उसका प्रहार अपने ऊपर उठाने के लिए तैयार रहेगे। बाप ने कोई गलत काम किया, तो बेटा उसका प्रहार उठाने के लिए तैयार रहेगा। बाप बेटे को संभालेगा और बेटा बाप को। अड़ोसी पड़ोसी को संभालेगा, एक गाव दूसरे गाव को संभालेगा। इस तरह से अतिम दशा में उस-उस स्थान पर बात सभल जायगी, तो शाति के लिए दूर से किसीको कही न जाना पड़ेगा, न आना पड़ेगा। उस अतिम दशा को हम लाना चाहते है, तो हमारी एक दिशा हो जाती है। परंतु हमें समझना चाहिए कि आज हिंसा-शक्तिया अत्यत नुकसान करनेवाली हैं, यह स्पष्ट देखते हुए भी, संरक्षक के तौर पर वे क्यो मान्य होती है ? जिस किसीके साथ हम बात करते है, उससे पूछते है कि क्या आज की हालत मे हिंसा-शक्ति में कोई ऐसी चीज है, जिससे कि मसला हल हो सकता है ? तो हर कोई कहता है कि कोई चीज नहीं है। फिर भी जहा रक्षण की बात आती है, वहां श्रद्धा से हिंसादेवी का आधार मान्य किया जाता है। इसका कारण क्या है, इस बारे में हमें सोचना चाहिए।

शब्द-शक्ति का विकसन

शब्दो के प्रयोग के विषय में कोई बहुत ज्यादा झिझक नही होनी

चाहिए। शब्द समझाने के लिए होते है। उनका अर्थ हम ठीक समझे, तो शब्द-शक्ति विकसित होती है। देश मे कुछ शब्द वीर-परपरा से चले आये है और कुछ शब्द संत-परपरा से। सत-परपरा से आये हुए शब्दो में, उनकी छाया के तौर पर शब्दच्छाया, शब्द के अर्थ की छाया, अर्थ-छाया के तौर पर दुर्बलता भी दीख पड़ती है। नम्रता, दीनता, लीनता, निरहकारिता, शून्यता, अनाक्रमणशीलता, शरणता, अपने लिए तुच्छता, आत्मनिंदा इत्यादि शब्दो का उपयोग सत हमेशा करते आये है। उनके जरिये अच्छे भावो के साथ कुछ बुरे भाव भी, दुर्बलता दिखानेवाले भाव भी प्रकट होते है। वीर-परंपरा से आये हुए शब्दो मे अच्छे भावो के साथ बुरे भाव भी प्रकट होते हैं। आक्रमणकारिता, अहकार, अस्मिता, सत्ता, लोगो पर लादने की वृत्ति आदि भाव शौर्य, धैर्य, वीर्य, पराक्रम के साथ-साथ आते है। दोनो परपराओ से प्राप्त हुए शब्द हमारे लिए अत्यत पवित्र है, यह समझना चाहिए। अगर इनमे से किसी परपरा के शब्द हम तोडेगे, तो जैसे पक्षी के पखो मे से एक पख टूटा, तो पक्षी उड नही सकेगा, वैसी हालत होगी। 'दोनो पख टूटे, तो वह उड ही नही सकेगा। हमारे विचार-शास्त्र के ये दो पख है। 'महावीर' याने परिपूर्ण अहिंसा को माननेवाला, जैन-धर्मी। और दूसरा राक्षसो का सहार करनेवाला महावीर हनुमान। 'महावीर' सज्ञा सस्कृत मे सिर्फ इन दो को ही लागू होती है। एक है जैनो के तीर्थंकर और दूसरे रामायण के अधिष्ठाता आर्य हनुमान। एक है वीर-परपरा के, दूसरे है सत-परपरा के, परतु दोनो है भक्त-शिरोमणि। अब क्या 'वीर' शब्द को हम कमजोर समझेगे? इसलिए 'कमाड' आदि शब्दो से आपको घबडाना नही चाहिए। जो शब्दो से डरेगे, वे निर्भयता खोयेंगे। तो आपको अपनी निर्भयता का व्रत कायम रखना चाहिए और शब्दो से डरना नही चाहिए।

यह 'इंपर्सनल' (अवैयक्तिक) है सब

दूसरी बात यह है कि बाबा जब बोलता है, तो 'इपर्सनल' (अवैयक्तिक) बोलता है, पर्सनल (वैयक्तिक) भाषा तो कभी बोलता नही है। ध्यान में

रखो कि यह पैदल यात्रा छोडनेवाला नही है। अब मान लीजिये कि किसी जगह कुछ भयानक घटना हुई, तव वावा से पूछने पर वह कहेगा कि सत्याग्रह की परपरा मे उपवासादि आता है, क्योकि उसका संवध अपनी आत्मा में पहुंचता है। व्यापक आत्मा मे वह वात आती है, तो पाप की जिम्मेदारी अपने पर आती हे, इसलिए पापक्षालन करना पड़ता है। अतः अंतिम अनशन आदि वातें हिंसा के खिलाफ कही-न-कही खडी हो सकती हैं। अहिंसाशास्त्र में इन चीजो का सुव्यवस्थित स्थान है और वह वावा को मजूर हैं। लेकिन वावा की अपनी वृत्ति यह है कि दुनिया मे कितनी भी कत्ले चले, कुछ भी चले, तो भी वावा दिन में तीन दफा वरावर खाता रहेगा। किसी घटना का कोई असर वावा के अनशन पर नहीं होगा। यह इसलिए कि वावा ने मुख्यतः सीखा है वेदात और उसके वाद अहिंसा। गांधीजी ने अहिसा सिखाई, तो वाद मे सिखाई; उसके पहले वह वेदांत सीखा हुआ था। वावा के मन मे यह वात है कि शरीर कभी तो गिरेगा ही, तो उसमे कोई हर्ज नही है, इसलिए उसका शोक आदि उसे विल्कुल नही होगा। फिर वावा से पूछा जाय कि कमांड हाथ मे लेने का अर्थ क्या, तो वह कहेगा कि उसका अर्थ है किसी मौके पर अतिम अनशन का जिम्मा उठाना; क्योकि उस परिस्थिति मे अतिम अनशन के विना कोई चारा नही, ऐसा मौका उपस्थित हो सकता है। वावा का कुल स्वभाव ऐसा ही है कि किसी भी पाप की जिम्मेदारी अपने पर लेने की उसकी वृत्ति नही है। फिर भी वावा जिम्मेदारी लेता है, क्योंकि परिस्थिति मे कुछ गंभीरता है, जिससे अपने निज स्वभाव के विरुद्ध कुछ जिम्मेदारी उठाने के लिए वह 'इंपर्सनली' (अवैयक्तिक रूप से) तैयार हो रहा है।

मर्यादा

एक वात स्पष्ट है कि जहा हम अनुशासन की वात कर रहे है, वहां यह केवल शांति-सेना तक ही सीमित है। इसमें किसीको अगर कोई संदेह है, तो वह नहीं रखना चाहिए।

...एक मुख्य कमांडर होता है, तो बीच में और होंगे ...

का उत्तर है । जी हा, होगे और हो भी चुके है । केरल मे आठ-नौ मनुष्यो ने हमारी उपस्थिति मे सभा के सामने खडे होकर प्रतिज्ञा ली कि अनुशासन मानने की बात के साथ हम शाति-सेना मे दाखिल होते है । इस तरह वहा पर केलप्पन् को नेता के तौर पर माना गया, जहा तक केरल का सवाल है । तो जैसे भारतीय नेता की बात हो चुकी है वैसे एक उपनेता भी हो चुके है । वह कोई आगे की बात नही रही है । यह अपनी-अपनी टोली बनाकर मार खाने के लिए खडे होने की बात चल पडी है । अहिंसा के कमाड मे अपनी आत्माहुति के सिवाय और कोई कमाड आती ही नही । बाकी तो छोटी-छोटी बातें होती है, परन्तु वे भी जरूरी होती है, इसीलिए 'कमांड' शब्द लागू होता है । जो भी छोटा या बड़ा कमांडर होगा, उसका प्रथम कार्य है, अपना बलिदान करना । इसके अलावा भी जो कमांड करनी है, उसका अब विवरण मैं करूगा ।

कमांड का प्रश्न

हिंसा की रक्षण-शक्ति किस चीज में है, यह आज हमारे सामने सवाल है। हिंसा की शक्ति इसमें है कि किसी एक पॉइंट (मुद्दे) पर खतरा है, तो हिंसा-शक्ति के पास ऐसा संगठन मौजूद है कि वह समूह को खड़ा कर सकती है। दो-चार, दस हजार का समूह एकदम खड़ा हो सकता है। अब अहिंसा में आक्रामक शक्ति न हो, तो क्या होगा? कल दादा (धर्माधिकारी) से यह बात हो रही थी। उन्होंने पूछा, "क्या आज्ञा से बलिदान देने की तैयारी हो सकती है? और अगर हो सकती है, ऐसा मान भी लिया, तो क्या आज्ञा ऐसी समर्थ हो सकती है कि मनुष्य उसके सामने अपना प्राण तुच्छ समझकर अपना बलिदान करने के लिए तैयार होगा? लेकिन क्या उस बलिदान में उसका हृदय प्रेम से भरा हुआ रहेगा?" कल के व्याख्यान में हमने मामूली प्रेम की अपेक्षा नहीं की थी, बल्कि मातृवात्सल्य की अपेक्षा की थी। भाई भाई का बचाव करता है, मित्र मित्र का करता है, परंतु हमने माता के प्रेम की अपेक्षा की। हमने उसके लिए जो मिसाल दी थी,

उसमें कहा था कि सामनेवाला हमारे सिर पर प्रहार कर रहा हो, तो हमें यह चिंता नही रहेगी कि हमारा सिर कैसे बचे, परतु यही चिंता रहेगी कि मारनेवाले के हाथ को तकलीफ न हो । कहने मे तो हमने यहां तक कह दिया है, तो सवाल उठाया गया कि क्या यह सारा आज्ञा से हो सकता है ? हमारा जवाब यह है कि स्वतत्र चितन से यह होने का जितना सभव है, उससे लेश-मात्र कम सभव आज्ञा से होने मे नही है । जो कार्य रामजी ज्ञानपूर्वक कर सकते है, उतना ही प्राणवान कार्य हनुमान कर सकते है, श्रद्धापूर्वक । हनुमान से वनस्पति लाने के लिए कहा गया, तो वह पहाड ही उठा लाया और कहा कि आप ही इस पर से चुन लीजिये कि कौनसी वनस्पति चाहिए । फिर बाद मे मै पहाड को अपनी जगह रख दूगा, क्योकि ज्ञान तो मेरे पास है नही। उसने सजीवनी पर्वत ही लाकर खडा किया था ! उसकी श्रद्धा इतनी अपूर्व थी कि उसके कारण रामायण मे जितनी महिमा राम की है, उतनी ही महिमा दास की—हनुमान की है ।

बापू के साथ की चर्चा

इस विषय पर गाधीजी के साथ हमारी जो चर्चा हुई थी, उसका थोड़ा जिक्र मै आपके सामने करूगा । १६४२ के आदोलन के पहले की बात है। गाधीजी का खयाल था कि इस वक्त जेल में जायगे, तो वहा प्रवेश करते ही फाका (उपवास) शुरू करेगे। जेल मे ऐसे ही पडे नही रहेगे । जेल मे पडे रहने की बात अब पुरानी हो गई । जहां हम अंग्रेजो का राज्य ही मान्य नही करते है, और उनसे कहते है कि यहा से हट जाओ, उस हालत मे हम जेल मे जाते ही फाका करेगे । यह सब उनके मन में था । यह कौन कर सकता है ? बलिदान की तैयारी कोई बड़ी बात नही है, परतु जिसके हृदय मे प्रेम भरा हो, वही बलिदान कर सकता है । तो प्रेमयुक्त बलिदान कौन कर सकता है, यह सवाल था । कोई व्यक्ति कर भी सकता हो, परंतु क्या उस चीज का आदोलन हो सकता है ? उसका एक सिलसिला बन सकता है ? क्या प्रेमपूर्वक फाका करके मर जाने का जन-आंदोलन हो सकता है ? जैसे सेना में लाखो लोग

दाखिल होते है, क्या वैसे इसमे हो सकता है ? गाधीजी समझते थे कि यह हो सकता है और इसका आरभ अपने से ही होगा । ऐसा नही कि वही हो सकता था, दूसरी बात भी हो सकती थी । प्रथम ज्ञान तो यही है कि उपवास का आरभ बापू ही करेंगे । इससे कुछ लोग घबडा गए थे, जो लाजमी ही था । सब लोग चाहते थे कि किसी-न-किसी तरह यह टले, कम-से-कम बापू उपवास न करे । उपवास का सिलसिला नही बन सकता है। उपवास की सेना नही बन सकती है, ऐसे काम आज्ञा से नही हो सकते है, ऐसा विचार बापू के इर्द-गिर्द के लोगो का था । उसमे केवल बापू को बचाने की कोशिश नही थी, बल्कि वह विचार ही था। ऐसे समय बापू ने मुझे बुलाया और मेरे सामने अपनी बात रखी कि मै इस तरह करना चाहता हू । सवाल यह था कि जो काम ज्ञानी मनुष्य ज्ञानपूर्वक कर सकता है, वही काम क्या अनुयायी श्रद्धा से कर सकते है ? क्या इस प्रकार हो सकता है ? मैने जवाब दिया कि जी हा, हो सकता है। और तब मैने मिसाल दी थी कि जो काम रामजी ज्ञानपूर्वक कर सकते है, वही काम हनुमान श्रद्धापूर्वक कर सकते है । बस, बात वही खत्म हुई। फिर ज्यादा सोचने का रहा नही । हम वहा से चले गए। उसके बाद नौ अगस्त का दिन आया। बापू गिरफ्तार हुए । बापू से हमारी उतनी ही बात हुई थी । उनका और हमारा कोई वचन-बधन नही हुआ था कि बापू वह करेंगे, तो हमे अमुक करना चाहिए। लेकिन जब बापू गिरफ्तार हुए, तो उस समय उनके मन मे यह था कि अभी उपवास नही करेंगे । उसका मौका आने पर करेंगे । पहले सरकार के साथ कुछ पत्र-व्यवहार वगैरा होगा। पर हमारे साथ उनकी बात हुई थी कि इस वक्त जेल मे नही रहेगे। जायगे, तो शुरूआत ही उपवास के साथ करेंगें, इत्यादि। परतु बापू का विश्वास था कि सरकार उन्हे मौका देगी।······सत्याग्रह-शक्ति कहा से आती है, यह देखिये। बापू ने सोचा कि अभी मेरी सरकार से बातचीत नही हुई है, तो सरकार १५ दिन मौका जरूर देगी । यद्यपि कुछ लोग उससे उल्टा मानते थे, फिर

भी बापू श्रद्धा से मानते थे कि उन्हे मौका दिया जायगा, लेकिन वह पकड़े गये। उन्हें मौका नही दिया गया। उस वक्त प्यारेलाल बाहर थे। तो बापू ने प्यारेलाल से कहा कि विनोबा को इत्तला दो कि जेल मे जाते ही उपवास नही करना है। उन्होंने मान ही लिया था कि जब यह शख्स मेरे साथ चर्चा करके गया है, तो वह उपवास जरूर करेगा। उन्होने कोई कमांड (आदेश) नही दिया था। परंतु कमांड से भी ज्यादा दिया जा सकता था, वह दिया था। वह चीज कमांड से कम की नही थी। जब उन्होने ऐसी सलाह पूछी थी कि क्या यह हो सकता है और हमने कहा था कि हां, हो सकता है। उसी दिन हम भी जेल मे गए। दादा साथ थे। जेल में जाते ही हमने जेलर से कहा, "तुम तो मुझे जानते हो कि मैं जेल के हर नियम का बारीकी से परिपालन करनेवाला हूं और दूसरो से करवानेवाला भी हूं। तुम यह भी जानते हो कि मेरे जेल में आने पर तुम्हारा फंक्शन (काम) मिट जाता है और तुम्हारा कुल काम मै ही करता हूं। परंतु इस वक्त वह नही होनेवाला है। मैंने सुबह तो खा लिया था, इसलिए दोपहर को सवाल नही, पर शाम को नही खाऊंगा और कब तक नही खाऊंगा, मैं नहीं जानता हूं। यह आपको डिसिप्लिन (अनुशासन) तोड़ने के वास्ते जरा भी नहीं है। मेरी एक डिसिप्लिन है, उसे मानने के वास्ते है।" यों कहकर मैं अंदर चला गया। दो घंटे के बाद बुलाया गया। बापू ने प्यारेलाल से जो कहा था, वह संदेश उन्होंने किशोरलालभाई के पास भेजा; क्योंकि वह वर्धा में थे। किशोरलालभाई ने वर्धा के डी० सी० से पूछा। डी० सी० ने गवर्नर से पूछा कि क्या इस तरह सूचना दे सकते हैं, तो गवर्नर ने कहा कि हां, दे सकते हैं, बशर्ते कि एक शब्द भी अधिक न बोला जाय; मुलाकात वगैरा कुछ नहीं, सिर्फ इतना ही कहा जाय कि बापू का आदेश है कि उपवास नहीं करना। डी० सी० ने कहा कि ठीक है, मैं उन्हे कहूंगा। किशोरलालभाई ने कहा कि इस तरह आपके समझाने से विनोबा नही मानेंगे, इसलिए हममें से किसी को जाना होगा। तो फिर बालुंजकर आये और उन्होंने बापू का आदेश सुनाया। तो मुझसे वह उपवास नहीं हुआ। फिर बाद

मे जब बापू ने उपवास शुरू किया, तब मैंने भी शुरू किया । पर मै कहना चाहता हू, अपने हृदय की अनुभूति कि बापू उपवास करते, तो जितने आनद से करते, मेरा दावा है कि मेरे उपवास मे उससे लेशमात्र कम आनद नही था । इतने लबे उपवास मैंने कभी नही किये थे । सात दिन से ज्यादा उपवास मैंने नही किये थे, परतु वेलूर जेल मे जब उपवास शुरू हुए, तो दो-चार दिन यो ही बीत गए और उसके बाद तो भास ही नही हुआ कि उपवास चल रहे हैं । रात में नीद गहरी आती थी और दिन मे अध्ययन चलता था । डाक्टर महोदय (वर्धा के) साथ थे । वह कुछ मालिश वगैरा करते थे, अपना जादू करते थे, तो उतना मै करने देता था, लेकिन चित्त पर ऐसा असर था कि बस आनद-ही-आनद है और कुछ है नही । ज्ञान तो मेरे पास नही है, आप जानते है कि ज्ञान तो उनके पास था । परतु श्रद्धा से मैंने माना था । मैंने उसे हुक्म समझा था । चाहे आप वह शब्द इस्तेमाल करे या न करे, उससे उसका पूरा अर्थ प्रकट नही होता है । परतु मैंने यह इसलिए कहा कि श्रद्धा से आज्ञा समझकर, अत्यत आनंदपूर्वक और प्रेमपूर्वक अपना बलिदान किया जा सकता है, इसमे मुझे कोई सदेह नही है । अगर मुझे सदेह है, तो यह है कि कोई ज्ञानपूर्वक काम करे, तो उसके ज्ञान मे संशय आ सकता है । मुझे आदेश देनेवाले बापू के याने किसी ज्ञानी के चित्त में कोई नुक्स हो ऐसा उन्हे लग सकता है, परतु श्रद्धावाले के चित्त मे कोई सदेह पैदा नही हो सकता है । इसलिए इसमे मुझे कोई सदेह नही कि आज्ञा से यह काम किया जा सकता है । अब आज्ञा कौन करे, किसे करे, ये सवाल पैदा हो सकते हैं ।

"इसमें विचार-शासन, स्वतत्रता आदि पर आक्रमण होगा । वह पहले शांति-सेना तक ही सीमित रहेगा, परतु कल दूसरे क्षेत्र मे भी लागू हो सकता है ।" इस तरह का डर प्रकट किया गया है । परतु जीवन मे इस तरह डरते-डरते काम करेगे, तो कैसे चलेगा ? भगवान ने गीता मे कहा है कि 'सहज कर्म कौतेय सदोषमपि न त्यजेत् । सर्वारभा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृता ।' (१८ : ४८) । सहज प्राप्त कर्म सदोष हो, तो भी

करना चाहिए, क्योंकि अग्नि के साथ धुआं होता ही है। हर किसी आरंभ मे खतरा है। सिर्फ एक गुजराती शब्द खतरे से खाली है। गुजराती में प्रयोग को ही 'अखतरा' कहते है। उसे छोड़कर बाकी जो भी प्रयोग होंगे, उनमें खतरा जरूर आयगा। विचार मे स्पष्टता होनी चाहिए कि ये जो आदेश इत्यादि दिये जाते है, वे कहां होंगे, उनका क्षेत्र क्या होगा। अगर मै किसीसे कहू कि कुए मे कूद कर मर जाओ, तो कोई श्रद्धा से इस आज्ञा का पालन कर सकता है। परंतु हम किसीसे यह नहीं कह सकते है कि फलानी चीज को ज्ञान मानो, ज्ञान न हो तो भी। ज्ञान के बारे मे आज्ञा हो ही नही सकती है। याने वह असंभव वस्तु है। फिर भी लोग कुछ करना चाहते है, धर्मांतर आदि जबरदस्ती से करते है।

जिस इस्लाम के लिए इतिहास मे यह जाहिर है कि उसने करोडो का जबरदस्ती से परिवर्तन किया, उस इस्लाम ने कहा कि—'ला इकराह फिद्दीन'—धर्म के बारे में कभी जबरदस्ती नही हो सकती है। जो मनुष्य कोई चीज नही समझ रहा है, उसे अगर कोई ऐसी आज्ञा दे कि अरे तू समझ कि मैंने आज्ञा दी है, और फिर भी नही समझता है? तो वह कहेगा कि आज्ञा से समझने की बात होती, तो तुम्हारे लिए मुझे इतना आदर है कि मै वह बात फौरन समझ जाता! पर अब नही समझ रहा हूं!—तो विचार के क्षेत्र मे परिपूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह सर्वोदय-समाज का बहुत बडा लक्षण है। उसमे हम किसी तरह से कसर नही आने देंगे, उसमें कसर आयगी ही नही। कही आयगी, तो उसका मतलब होगा कि कोई एकाध मनुष्य मूरख साबित होगा। उससे सर्वोदय-समाज के विचार में कोई फर्क नही आयगा।

अहिंसा रक्षक या मधुर मात्र?

तो मैं कहता था कि एक जगह एकत्र शक्ति लाने की जो सहूलियत हिंसा मे है, वह अहिंसा में न हो, तो आज अहिंसा काम नही करेगी। अंतिम हालत मे वैसा प्रसंग न भी आये, जब मानसिक, भौतिक और सामाजिक कार्य पूरा हो चुका होगा। उस हालत मे यह सवाल ही नही आयगा।

परतु आज, जबकि समस्याए उपस्थित है, तो उस हालत मे हिंसक लोग एकदम हजारो, लाखो-लोगो को एकत्र खडे कर सके और हम उस तरह लाखो को एकत्र न ला सके, तो अहिसा रक्षणकारिणी नही होगी, जीवन मे थोड़ा-सा माधुर्य लानेवाली मात्र होगी ।

एक सवाल यह पूछा गया है कि पचविध निष्ठावाले लोकसेवक क्या काफी नही है ? उनके होते हुए शाति-सेना की क्या जरूरत है ? याने उसमें शाति-सेना के मूल विचार पर ही प्रहार है । इस पर मुझे यह कहना है कि कई मौके ऐसे होते है कि वहा अगर 'डिले' (विलव) हो गया, तो काम नही होता है । नेपोलियन से जब पूछा गया कि वॉटरलू की लडाई मे तुम्हारी पराजय किस कारण से हुई, तो उसने कहा कि मार्शल ने सात मिनट देर की, इसलिए मैने वॉटरलू की लडाई खोई । पहले से हमारी ऐसी व्यवस्था हुई थी कि फलानी जगह फलानी सेना फलाने वक्त आयगी । पर उसके आने मे सात मिनट देर हुई । खैर ! इतना 'लिटरल' (शाब्दिक) अर्थ लेने की जरूरत नही है । परतु ऐसे मौके आते है, तो थोडे ही समय मे सेना भेजने की जरूरत होती है । इसलिए 'कमाड' शब्द इस्तेमाल किया गया । अब उसका जो सौम्य-से-सौम्य अर्थ आप ले सकते है, वह ले ।

(गुजरात के कार्यकर्ताओ के साथ, मैसूर, २७-९-५७)

: ४ :

शांति-सेना : प्रश्नोत्तर

(विनोबा)

प्रश्न : आप नये-नये कार्यक्रम लेते है और हम पुराने कार्यक्रमो को ही पूरी तरह से अमल मे नही ला सकते है । तो यह सब बालू का महल कहा तक टिकेगा ?

उत्तर : मनुष्य मे चित्त का एक अश है और दूसरा अंग है, शरीर का । वह जो शरीर का अश है, वह जड है । इसलिए वह प्रति-क्षण सुस्ताता

जाता है, वह उसका लक्षण ही है। इसीलिए सतत नई-नई चालना देते रहना पडता है और हमें एक कदम आगे ले जानेवाला विचार जब सामने आता है, तब भान होता है कि हम कितने पिछडे हुए हैं। तब मनुष्य जरा जोर लगाकर बचा हुआ कार्यक्रम पूरा कर लेता है। अगर आगे के कार्य-क्रम का दर्शन न हो, तो पुराना कार्यक्रम ही 'रोजे कयामत' तक जारी रहेगा। परतु आगे का कार्यक्र उमपस्थित हुआ कि पुराना कार्यक्रम पूरा करके उसे छोडना ही पडता है, इसलिए गति देने के लिए यह जरूरी है कि उत्तरोत्तर दर्शन बढ़ता जाय।

एक शिखर पर चढते है, तो दूसरे का दर्शन होता है। तो नये कार्य-क्रमो से पुराने कार्यक्रमो को पूर्ण किया जाता है और गति मिलती है। अलावा इसके पुराने कार्यक्रमो को नया विशाल अर्थ प्राप्त होता है। इस-लिए पुराना कार्यक्रम हमने छोडा नही। कुछ लोग कहते है कि यह शख्स एक-एक कार्यक्रम छोडता जाता है—भूदान छोडा, ग्रामदान निकाला, अब ग्रामदान छोड़कर शांति-सेना की बात निकाली है! इसे पुरानी बातें छोड़ने की आदत है। बात यह है कि यह विज्ञान का जमाना है और वह किसी आलसी के लिए रुकनेवाला नही है। अगर हम शाति-सेना की बात नही करते, तो ग्रामराज्य, जो आगे बननेवाला है, वह खतरे में है। मद्रास राज्य मे तिरुमगलम् तालुका हमने तालुकादान के लिए चुना और उसीके नजदीक के जिले में मार-काट की घटनाए हो रही हैं, जिन्होंने सारे भारत का ध्यान खीचा है। कुछ घटनाएं अन्यत्र भी हो रही है। अब आप सोच सकते है कि काल कितने वेग से दौड़ रहा है। इसलिए विचारो मे आगे बढना ही पडता है, तब ताजगी आती है, नये-नये अर्थ ध्यान मे आते हैं। यह बहुत जरूरी प्रक्रिया है।

प्रश्न : आपने सुप्रीम कमाड की बात जिस तरह समझाई, उसका अर्थ होता है, आत्म-समर्पण करना। आदेश देने के इस प्रकार मे क्या प्रेम का अभाव नहीं होगा? क्या उससे प्रेरणा मिलेगी?

उत्तर : आपको समझना चाहिए कि हमने मामूली कमाड की बात

नही की सुप्रीम कमांड की वात की है। याने वह छोटी-छोटी चीजों मे दखल देनेवाली नही है। वह जितनी कम दखल देगी, उतनी ज्यादा सुप्रीम होगी। इसलिए सुप्रीम कमाड का डर रखने का कोई कारण नही है, वल्कि हम अपने मन को अतिम वलिदान के लिए तैयार रखे। गुरु की तलाश याने शिष्यत्व की प्राप्ति का प्रयत्न। सुप्रीम कमाड याने आखिर के प्रयत्न के लिए अपने मन को तैयार रखना। इसके सिवाय उसका ज्यादा अर्थ मत करो।

प्रश्न : जिस शासनमुक्त समाज का आदर्श हम मानते है, उसमें अततोगत्वा न आदेश रहेगा, न कोई आदेशक ही। उसमें हर व्यक्ति अतः-प्रेरणा से तथा निजी अभिक्रम से व्यवहार करेगा। ऐसी अवस्था में शाति-सैनिकों के गुणो से युक्त अनेक व्यक्ति समाज मे रहेंगे, लेकिन शाति-सेना जैसा कोई सगठना, फिर वह कितना भी लचीला (इलॅस्टिक) क्यों न हो, नही रहेगा, ऐसा मुझे लगता है। सक्रमण-अवस्था में उसको मान सकते है।

उत्तर : ये जो एटम और हाइड्रोजन वम वगैरा तैयार हुए है, उनके परिणामस्वरूप शासनमुक्त समाज जल्दी आने का संभव दीखता है, जिनसे समाज को ही मुक्ति मिल जायगी और किसी मसले पर सोचने का कोई कार्यक्रम नही रहेगा। इसलिए अंततोगत्वा क्या होगा, इस वारे मे मै कभी नही सोचता हू। सक्रमण-अवस्था में क्या करना है, यह भी नही सोचता हू, क्योकि सक्रमणावस्था एक सनातन अवस्था है। वह भूतकाल और भविष्य के वीच का काल है। हर कोई काल सक्रमण-काल है। इसलिए मै उस वारे में भी नही सोचता। मै एक प्रचलित परिस्थिति, मौजूदा आवश्यकता के विषय में, जो आज साक्षात उपस्थित है, सोचता हूं। भूदान-यज्ञ किसी सूरत से शुरू नही होता, अगर तेलगाना की वह घटना नही वनती, उस दिन जमीन की माग नही होती। कार्यक्रम परिस्थिति के अनुसार ही प्रकट होता है और परिस्थिति के अनुसार ही उसे वदल सकते है। आज हिंदुस्तान की परिस्थिति शाति-सेना की माग करती है। उसमें से यह पैदा हुई है। अगर वह माग पूरी हो जाय, शांति स्थापित करने

का प्रसग न आये, तो वह शाति-सेना सेवा-सेना होगी। फिर उसके बाद सेवा के भी प्रसंग नहीं आयगे। सब लोग अपना-अपना काम कर लेंगे, तो मेना की जरूरत नही रहेगी। एकरस समाज, सर्वोदय-समाज बन जायगा। ीरे-धीरे एकरसता, एकरूपता आती जायगी और विविध भेद लीन होते जायगे। उस अतिम अवस्था मे तो जो किसान होगा, वही तत्त्वज्ञानी होगा, वही शाति-सैनिक होगा, वही सत्याग्रही होगा। उस एक मे सारे समाते जायगे। ऐसा वह परिपूर्ण होगा। परतु आज की अवस्था मे वह नही है। आज हमारा ग्रामदान, ग्रामराज्य कुल-का-कुल खतरे मे है, अगर सारे भारत मे, जिसे हम अहिंसा कहते है—अग्रेजी 'पीस' नही, बल्कि अहिंसा—उसका वातावरण हम पैदा न कर सके और न ऐसी स्थिति जिससे उसका नियत्रण आगे भी बना रहे। सिर्फ यही न हो कि चंद लोग कुछ काम कर रहे है, कुछ माधुर्य पैदा कर रहे है।

खारे सागर मे शहद के बिंदु डालकर माधुर्य लाने की कोशिश कर रहे है। ऐसी कोशिश कोई करेगा तो वह 'चेष्टा'[1] (मजाक) ही होगी। इसलिए अहिंसा का काबू निर्माण होना चाहिए। सत्वगुण की पटरी चाहिए। फिर उस पर रजोगुण का इजन जोरो से दौड़ने दो, उसके साथ तमोगुण के डिब्बे भी लगने दो। रजोगुण, तमोगुण को भी हम चाहते है। परंतु हम चाहते है कि पहले पटरी तो सत्वगुण की हो। चद लोग अहिंसा का काम कर रहे है। इतने से अब काम नही चलेगा। हरएक के मन में अहिंसा का भाव आने में देर भले ही हो, परतु आज देश पर अहिंसा का प्रभाव पडना चाहिए। इसलिए शाति-सेना का कार्यक्रम बहुत दूर का कार्यक्रम नही है, बल्कि आज का है। आज मैने बबई के कार्यकर्ताओ से कहा कि बंबई मे 'सहस्रनाम' सुनाई देना चाहिए, याने कम-से-कम हजार सेवक वहा निकलने चाहिए, जिससे कि बबई पर अहिंसा का प्रभाव रहेगा। फिर

---

१. यहां 'चेष्टा' शब्द खिल्ली उड़ाने के अर्थ में प्रयुक्त है, जो मराठी में चलता है।

वाकी की कई चीजे चलती रहेगी। दूसरे मसलो के लिए जो आंदोलन होते है, वे चलेगे। परतु उन आदोलनो से समाज को खतरा पैदा नही होगा, वल्कि लाभ होगा।

प्रश्न : सत्याग्रही सेवको की मौजूदगी मे 'शाति-सेना' निर्माण करने की आवश्यकता क्यो प्रतीत हो रही है ?

उत्तर : सत्याग्रही सेवको की मौजूदगी अभी मुझे प्रतीत नही हो रही है। 'शाति-सेना' सत्याग्रही सेवको के कार्य का एक विभाग-मात्र है। सत्याग्रही सेवको के कर्तव्यो मे से जो सबसे वडा कर्त्तव्य 'शाति-सेना' का कार्य है, उस पर सबका ध्यान हम खीचना चाहते है। किसी वडे ग्रथ के अनेक प्रकरण होते है, परतु एक प्रकरण की तरफ हम आपका ध्यान खीचना चाहते है, जो आज जरूरी है। सत्याग्रही सेवक आज थोडे है। हम चाहते है कि उनकी विचार-सृष्टि मे एक वस्तु की ओर फौरन ध्यान खीचा जाय। आज समाज मे जो अधाधुध चल रही है, उसके बीच जाकर खडे रहने की जिम्मेदारी हमारी है।

प्रश्न : इमर्जेसी (सकट) के समय सत्याग्रही सेवको पर, 'शाति-सैनिक' वनने की पूरी जिम्मेवारी नही सौपी जा सकती। यह 'डुप्लीकेशन' (दोहरा काम) किस कारण किया जा रहा है ?

उत्तर : इस सवाल पर सोचना चाहिए कि शाति की जिम्मेदारी किस पर कौन डालेगा ? जो शाति-स्थापना की जिम्मेदारी उठायगा, उसी पर उसका जिम्मा डाला जायगा, दूसरे पर नही। वह शख्स पहले से ही शाति-सेना का सैनिक हो, पचविध निष्ठा माननेवाला हो, यह जरूरी नही है। एक पापी, पतित, दुराचारी भी सिन्सीयर (ईमानदार) हो सकता है। वह सिन्सीयर्ली (ईमानदारी से) अपने पाप मे वरतता होगा। कही वैमनस्य पैदा हुआ, तो उसके अतरात्मा मे चिनगारी पैदा हो सकती है और शाति-स्थापना के लिए वह अपना वलिदान दे सकता है। उसको वलिदान करने का अधिकार है। सभव है कि उस वलिदान से उसी एक क्षण मे वह समाज मे शाति की स्थापना कर सके और अपने पूर्व पापो का दहन कर सके।

यह सब हो सकता है। इसलिए यह जरूरी नही है कि शांति की स्थापना शान्ति-सनिको के जरिये ही होगी। परतु यह योजना नही हो सकती है कि शांति-सेना के लिए पापी पुरुष ही नाम दे, ताकि उनके पाप-दहन की योजना की जाय। अतिम क्षण कुछ भी हो सकता है, परतु योजना बनाते समय शास्त्रीय योजना ही बनानी पडती है। उसमे यह बात होगी कि शाति-सैनिक को मौके पर निर्देश होने पर अपना काम अपनी आसक्ति की जगह छोडकर, छलाग मारकर वहा जाना चाहिए, जहा जाने के लिए कहा गया हो। विशेष प्रसंग में ही यह प्रसग आयगा। सामान्यतया शाति-सैनिक अपने स्थान पर काम करता रहेगा। उसी रास्ते से जाना है, यह हम बताना चाहते है। हम एक रास्ता बना रहे है। गीता मे कहा है कि पुण्यवान पुरुष चार प्रकार की भक्ति करते है :

'चतुर्विधा भजते मा जना सुकृतिनोऽर्जुन।' (७-१५)

लेकिन सवाल निकलता है कि क्या भक्ति पुण्यवानो का ही ठेका है ? भगवान ने तो कहा है कि कोई अत्यत दुराचारी हो, तो भी यदि वह मेरी अनन्य भक्ति करे, तो परमेश्वर का प्रिय हो सकता है और वह भी काम कर सकता है :

'अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मंतव्य सम्यग्व्यवसितो हि स ।" (९-३०)

परतु नियम यह है कि भक्त सदाचारी होता है, यद्यपि अत्यत दुराचारी भी भक्त बन सकता है। सवाल यह है कि जहा भक्ति है, वहां काम होगा। वह भक्ति किसीके भी दिल मे किसी भी क्षण पैदा हो सकती है। यह भी सभव है कि जिसने अपने को शाति-सेना के लिए तैयार किया हो, वह ऐन मौके पर झिझक महसूस करे—परतु आज शाति-सेना की योजना की एक धर्म-विचार के तौर पर जरूरत है।

प्रश्न : शाति-सेना की घोषणा के बाद यहा, कार्यकर्ताओं मे एक प्रकार का कन्फ्युज़न (भ्रम) निर्माण हो गया है। आज के आपके स्पष्टीकरण के बाद भी वह कायम है, ऐसा मुझे लगता है।

उत्तर : कन्फ्युजन (भ्रम) निर्माण नही हुआ है, भ्रम प्रकट हुआ है। और उसका प्रकट होना अच्छा है, क्योकि उसका निरसन का मार्ग खुला हुआ है। हमारा मन बिल्कुल नि शक है, स्पष्ट है। परतु लोगो का बहुत सारा चितन 'नेब्युलस्' होता है, अस्पष्ट होता है। वह अस्पष्टता नवनिर्मित नही होती है, सिर्फ प्रकाशित होती है। वैसे भ्रम होने का कोई कारण तो नही है, परतु जो कारण अदर पडे है, उनके कारण वह होता है।

लोकशाही का दावा करनेवाली सरकार सत्ता के जरिये शाति-स्थापना करने मे समर्थ हो ही नही सकती है। मान लीजिये कि हिंदुस्तान मे दंगे करनेवाले लोगो की मेजॉरिटी ो जाय, तो लोकशाही क्या करेगी ? लोकशाही मे मेजॉरिटी के आधार पर चुनाव होता है, इसलिए लोकशाही का अर्थ है, मेजॉरिटी के आधार पर खडी हुई सरकार। वह 'ऍवरेज' (औसत) सरकार होती है। पर बुराई का प्रतिकार और उसका निर्मूलन 'ऍवरेज' (औसत) से नही होता है। बुराई का प्रतिकार अच्छाई से होता है।

देश मे जो गोलिया चलती है, उस पर बहुत सारे लोग टीका करते है, हम भी टीका करते है। परतु एक बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि लोगो का पत्थर फेकना और लोकशाही पद्धति से बनी हुई सरकार का गोली चलाना एक ही कोटि मे नही है, वे दोनों भिन्न-भिन्न है। सरकार की ओर से जो गोलिया चलती है, उसके पीछे एक सैक्शन (सम्मति) है, उन्हे एक आज्ञा हुई है। पर जो पत्थर फेके जाते है, उसके पीछे सैक्शन (सम्मति) नही है, आज्ञा नही है। दड का अधिकार हमने सरकार के हाथ मे दिया है। उसमे इतनी ही चर्चा हो सकती है कि सरकार उसका उचित उपयोग कर रही है या अनुचित, गोलिया जो चली, वे प्रमाण मे ज्यादा थी या कम। परतु पत्थर फेकनेवालो के बारे में यह चर्चा नही हो सकती है कि पत्थर फेकना उचित था या अनुचित, इतनी मात्रा मे फेकना योग्य है या नही है, आदि। उसके बारे मे यही कहा जा सकता है कि पत्थर फेकना गलत है। आप लोगो ने बाकायदा गोलिया चलाने की सत्ता सरकार के हाथ मे दी है। उसके पीछे आपकी, हमारी और सबकी सम्मति है। उस बारे में इतनी ही

चर्चा हो सकती है कि गोलियां मौके पर चलाई या बेमौके पर चलाई। गोली चलाना ही गलत है, यह बात तब तक नही हो सकेगी, जब तक जनता द्वारा सरकार को फौज खत्म करने की आज्ञा ही न दी जाय। आज पार्लमेंट मे सरकार की तरफ से जो 'बिल' आते है, उनमे सुझाव पेश किये जाते है कि फलाना खर्च कम कर दिया जाय। परंतु फौज के लिए सरकार की तरफ से जो रकम मांगी जाती है, उसके बारे मे कोई ऐसे सुझाव पेश नही किये जाते है। वे मांगे एक क्षण मे मंजूर होती है। सरकार से सिर्फ इतना ही पूछा जाता है कि सेना पर काफी खर्च कर रहे हो या कम कर रहे हो ? हमारे बचाव की ठीक व्यवस्था है या नही ? आधुनिकतम शस्त्रास्त्र आपने खरीदे है या पुराने गए-बीते शस्त्रो से ही चला रहे हो ? सरकार सेना पर जो खर्च करती है, उसके खिलाफ किसीकी कोई शिकायत नही होती है। इसलिए आप किस आधार से कहते है कि गोली चलाना गलत है ? गोली चलाना आज की हिंदुस्तान की समाज-रचना मे मान्य की हुई बात है, परंतु पत्थर फेकना मान्य नही है। ये दो बाते ध्यान में रखनी चाहिए। यह ठीक है कि पत्थर फेकने से सिर्फ सिर फूटते है, प्राण नही जाता है और गोली से प्राण जाता है! लेकिन वह बदूक अहिंसा के नजदीक है और ये पत्थर अहिंसा के नजदीक नही है।

तो सरकार औसत सरकार होती है, इसलिए वह अशांति के तत्व के निरसन के लायक नही होती। उससे वह काम नही बनेगा। फिर वह काम किससे बनेगा ? इसकी जिम्मेदारी आप और हम पर आती है, जो अहिंसा और सत्य को मानने का दावा करते है, जन-शक्ति का, शासन-मुक्ति का जिनका ध्येय है और गांधीजी की विरासत हमें मिली है, ऐसा जो समझते है। इसलिए कमांड का कोई सवाल है नही। यह हमारा बिल्कुल स्पष्ट कर्तव्य है। जो शांति-सेना मे नाम देगे, वे लिखित सैनिक होंगे, परंतु अलिखित सैनिको के तौर पर लाखो-करोड़ो लोगों को इसमे शामिल होना चाहिए।

प्रश्न : थोड़े समय के लिए शांति-सेना की आवश्यकता मान भी ली

जाय, तो भी उसके लिए आपको अपनी 'कमाडरशिप' [illegible] की आवश्यकता क्यो महसूस हुई, जबकि आपका नेतृत्व भारत की जनता ने छः साल पूर्व और सर्वपक्षीय नेताओ ने ग्रामदान-सम्मेलन मे मान ही लिया है ?

उत्तर · विनोबा न कभी नेता रहा है, न कभी नेता बननेवाला है, न वह कभी 'नेय' भी बननेवाला है । 'न नेयो, न नेता ।' गाधीजी ने जाहिर किया था कि यह व्यक्ति व्यक्तिगत सत्याग्रह के लायक है । विनोबा केवल व्यक्ति ही है, इससे ज्यादा और कुछ नही है, यह समझना चाहिए । जहा तक 'विनोबा' का ताल्लुक है, वह कमाडर दूसरा है और विनोबा दूसरा है ।

दूसरी बात यह है कि अपने जीवन मे कई प्रकार की भक्ति के अनुभव लिये है । गुरुभाव, मातृवात्सल्य आदि अनेक प्रकार की भक्ति का रसास्वादन हमने चखा है । परतु हमारे निज के जीवन मे मैत्री का ही विकास हुआ है, दूसरे प्रकार का नही । अपने सगे भाई के साथ हम मैत्री का ही व्यवहार करते है । न हमने किसीको गुरु माना है, यद्यपि गुरु की योग्यता हम समझते है और न हम किसीको शिष्य बनाते है, यद्यपि पचासो विद्यार्थियो को हमने पढाया है । हमारे भाई भी है, परतु हमने किसीको न भाई माना है, न दुश्मन माना है । मित्र के नाते सलाह के सिवाय दूसरी कोई चीज हमसे नही बनी है, न बन सकती है । परतु वह 'कमाडर विनोबा' दूसरा है । वह कौन है, मै नही जानता हू ।

प्रश्न : क्या शाति-सैनिक को रामनाथपुरम् जैसे उपद्रवो के बीच में शाति-स्थापना के हेतु भेजा जा सकता है, जहाकि लाठिया और गोलिया चल रही है ? वहा तुरत काबू कैसे करेगे ?

उत्तर : यह मै भी नही जानता । इसलिए मैने कहा कि इसमें आपको हिदायत नही मिलनेवाली है । कर्तृत्व इतना विभाजित होगा कि आप उस क्षण सलाह मागेगे, तो भी नही मिलेगी । इतना अतिरिक्त कर्तृत्व आप पर लादा जायगा । जो खुद यहा बैठा है, वह आपको क्या सलाह देगा कि मोरचे पर जाओ । इसलिए मै सलाह नही देता हू । परतु 'गीता

प्रवचन' मे मैने एक मिसाल दी है कि सभा मे गडवड हो रही है । वहा १०-२० स्वयंसेवक जाते है और शाति रखने की कोशिश करते है, परतु शाति नही होती है । लेकिन एक ऐसा शख्स है, जो वहा आया और उतने मे ही शाति हो जाती है । शाति-स्थापना की वात आत्मशक्ति पर निर्भर है, इसलिए जितनी आत्मशक्ति विकसित होगी, उतना काम होगा । सत्पुरुपो का वर्णन करते समय उनके आतरिक गुणो का वर्णन किया जाता है । कहा जाता है कि उसने किसी पर कृपाकटाक्ष डाला, तो वहुत वडी वात है । जिसकी आखो मे ही करुणा भरी हुई हो, ऐसा मनुष्य वहा जायगा, तो उसके जाने से ही शांति होगी । इसलिए उसकी कोई विधि नही है । वहा जाने पर क्या होगा, यह तो वही मालूम होगा । वह अतर की स्थिति पर निर्भर है ।

(निवेदक-शिविर, मैसूर, २७-९-५७)

: ५ :

शांति-सेना में कर्तव्य-विभाजन और विचार-शासन

प्रश्न : विचार-शासन और कर्तृत्व-विभाजन की वात आपने चांडिल मे कही थी । अव आप आचार-नियमन की वात करते है, तो क्या चांडिल-वाली प्रक्रिया कायम है या उसमे कोई फर्क पडा है ?

उत्तर : शाति-सेना की रचना मे परिपूर्ण कर्तृत्व-विभाजन है । खयाल यह है कि सारा हिंदुस्तान सत्तर हजार हिस्सो मे विभाजित किया जाय और उस-उस हिस्से मे एक-एक मनुष्य रहे और वह अपनी स्वतत्र वुद्धि से वहां काम करे । उस वुद्धि की कोई सप्लाई (रसद) कही से होने की कोई योजना हमारे पास नही है । अव अपने लिए, अपने सिद्धातो के लिए और उस समूह के लिए, जिसका वह सेवक वना है, स्वतंत्र रीति से जिम्मेदारी है । अगर वह स्वतंत्र न हो, तो वहा वह काम कर ही नही सकता है, उसे

कुछ सूझेगा ही नही । हर मौके पर वह सवाल पूछेगा, तो उत्तर देनेवाला दे भी नही सकेगा । उत्तर देनेवाला उस स्थान मे तो नही रहेगा । इसलिए पूरी जिम्मेदारी, कर्त्तृत्व विभाजित होता है और विचार-शासन उसके लिए प्रमाण है । अपने विचार से वह सबकी निरतर सेवा करे, सबके परिचय मे रहे, सबके सुख-दु ख को पहचाने, सबके सुख से सुखी हो, सबके दु ख से दु.खी हो, उसका कोई अपना सुख-दु ख न हो और मौके पर अत्यत प्रेमपूर्वक, निर्वैर भाव से ही नही, बल्कि मातृवत् वात्सल्य-भाव से अपना बलिदान देने के लिए वह तैयार रहे । इसके सिवा दूसरा कोई शासन उसके पास नही है । इस तरह विचार-शासन और कर्तृत्व-विभाजन की परिपूर्ण योजना वहा होती है, जहा आप इस प्रकार का आयोजन करते हैं । उन (हिंसक) पलटनों का आयोजन इस प्रकार से नही होता है । उन्हे एकत्र रखा जाता है, विशेष प्रकार से ट्रेनिंग दी जाती है, उन्हे यान्त्रिक बनाया जाता है, बाहर के किसी विचार का उन्हे स्पर्श न हो, ऐसी योजना की जाती है, जिससे कि उनमे बुद्धि-भेद पैदा न हो । परतु हमारी योजना मे तो विश्व मे जो विचार-प्रवाह चलते है और जिनकी प्रतिक्रियाए समाज के चित्त पर होती है, उन सबका जागृत भाव से, स्वतत्र बुद्धि से, विश्लेषणपूर्वक चिंतन करना सेवको का कर्तव्य है । किसी भी विचार को ग्रहण करने के लिए या उसका परित्याग करने के लिए वह मुक्त है, बल्कि अगर वह किसी हकीकत से परिचित नही रहेगा तो, उसकी वह अक्षम्य गलती मानी जायगी । दुनिया के किसी ज्ञान से उसे वचित रखने की बात नही है, बल्कि दुनिया के कुल ज्ञान से उसे अपने-आपको परिचित रखने की बात है । तिस पर भी यह कमाड कहा आती है ?

मान लीजिये कि एक क्षेत्र मे काम करनेवाला सेवक अपने क्षेत्र मे बाहरी मदद चाहता है । तब फिर सवाल आता है । हा, वह यदि मदद नही चाहता है तो फिर कोई सवाल ही नही उठता । फिर वह अपना एकाकी सरदार है ही । अपना काम कर रहा है, स्व-समर्थ है । सारा भारत निश्चित है कि देश मे अशाति की योजना है, तो उसके साथ शाति की भी योजना है,

कोई फिक्र है नही। परंतु बाहर से कोई मदद चाहता हो, ऐसा प्रसंग भी कभी आ सकता है। उस हालत मे तुरंत मदद भेजी जानी चाहिए। उसमे देर न होनी चाहिए और वह मदद ऐसे लोगो की पहुंचनी चाहिए, जोकि श्रद्धालु है। यह मै स्पष्ट करना चाहता हू कि दूसरे के क्षेत्र मे जाकर चिकित्सक बुद्धि का उपयोग हम नही कर सकते हैं। वहा जाकर वहा काम करनेवाले मनुष्य की कमाड (आज्ञा) माननी होती है, उसे वहा के अनुकूल होना होगा, क्योंकि उसे मदद देनी है। इसलिए वह श्रद्धा से काम करनेवाला होना चाहिए और उसे आदेश देकर उस स्थान मे तुरत भेजनेवाली कोई एजेसी चाहिए। फिर वह एजेंसी किसी व्यक्ति की हो, तो अधिक श्रद्धास्पद होगी या किसी समूह की हो, तो अधिक श्रद्धास्पद होगी, इसका निर्णय मानव को अभी करना बाकी है। बहुत बोला जाता है कि वीरपूजा नही होनी चाहिए, परतु 'अवीरपूजा' हो ही नही सकती। वीरपूजा नही होनी चाहिए, यह हम तब तक बोलते रहेगे, जब तक कोई वीर सामने खडा नही होता है। हम खूब ऐठ करे कि हम निर्गुणपूजक है; सगुणपूजक नही हैं; परंतु यह तब तक चलता है, जब तक सगुण का साक्षात्कार नही होता है। जहां सामने सगुण खडा होता है, वहा हमने ऐसा कोई निर्गुणवादी नही देखा, न सुना, जिसका सिर वहा न झुका हो। यह हर क्षेत्र मे होता है। इसलिए वीरपूजा का उतना डर नही है, जितना अवीरपूजा का डर है। ऐसे अवीरो का महत्व सामूहिक योजना के कारण बढ जाता है। लोग चुने जाते हैं और उसके तरीके ऐसे होते है कि जो चुने जाने के लायक है, वे उससे अलग रहते है और जो वास्तव मे लायक नही है, वे ही चुने जाते है। इसलिए सामूहिक योजना विश्वसनीय है या कोई श्रद्धेय व्यक्ति विश्वसनीय है, इसका निर्णय अभी समाज को करना बाकी है। अगर यह हो कि सामूहिक योजना से फैसला हो, तो अधिक स्फूर्ति आती हो और उतनी व्यक्ति-निरपेक्षता वास्तव मे हममें आती है, तो अच्छा ही है। हमे व्यक्ति-निरपेक्ष तो जरूर बनना चाहिए। जहा तक विचार का ताल्लुक है "विचार विरुद्ध व्यक्ति" ऐसा सवाल खड़ा हो, तो विचार ही प्रधान है, व्यक्ति की कोई हैसियत नही

है। परतु एक जगह विचार के साथ व्यक्ति है और दूसरी जगह व्यक्तिहीन विचार है, तो चूकि हम स्वय देहधारी है, इसलिए वह विचारयुक्त व्यक्ति अवश्य श्रद्धेय सावित होगा। ऐसी अभी तक समाज की स्थिति है। आगे विचार की निष्ठा सर्वत्र फैली हुई होगी, एक-दूसरे से विचार-विमर्श करने की भी जरूरत नही रहेगी, तव उस हालत मे, समाज आगे वढ सकता है। परंतु वौद्ध धर्म मे भी उन्होने 'वुद्ध शरण गच्छामि' से आरभ किया। हमे समझना चाहिए कि एक पॉइट (विदु) होता है, जहा मनुष्य की वुद्धि काम नही करती। वैसे वुद्धि वहुत ही काम करती है, वह वलवान है। परतु एक विंदु ऐसा उपस्थित होता है, जहा वुंद्धि काम नही करती है और वहा श्रद्धा काम देती है। यह श्रद्धा का तत्व वुद्धि के विरुद्ध नही हे, वुद्धि का मददगार है। अव सवाल इतना ही है कि एक मध्यवर्ती एजेसी खडी हो जो लोगो को सूचना दे कि फलानी जगह फलाने दस मनुष्यो को जाना है। उस एजेसी के जरिए आदेश मिलने पर अपने-अपने कार्य को छोडकर अपने कुटुव का भी परित्याग करके जाना होगा। इसमें अपना वलिदान देना, यह वहुत वड़ो वात नही है, परतु कुटुव का परित्याग करना कठिन है। और वहुत सारे कुटुववाले गृहस्थ होते है। उस हालत मे अपना छोटा वच्चा, जो अभी वारह दिन हुए पैदा हुआ, उसकी माता लाचार पडी है और उधर से हुक्म आया, तो यह सव छोडकर जाना होगा। अपना वलिदान तो देना ही है, जवकि उसने शाति-सैनिक वनने की प्रतिज्ञा की है। उसकी इतनी तैयारी है ऐसा मान लीजिये और उसके हृदय मे सर्वोदय-विचार भरा हुआ है इसलिए प्रेमपूर्वक अपना वलिदान देने की उसकी तैयारी है, यह भी मान लिया, यद्यपि ये दोनो वाते कठिन है, फिर भी मान सकते है। लेकिन सवसे कठिन वात है, प्रियजनो का वियोग और कयाम के लिए उन्हे छोडकर जाने का प्रसग और आज्ञा, कमाड तो है कि फौरन जाना चाहिए।

ज्ञानदेवकृत 'अमृतानुभव' का एक वाक्य मै आपके सामने रखना चाहता हू। इसमे ज्ञानदेव ने गुरु का वर्णन किया है—"आना उपाय-वन

वसतु । आज्ञेचा आहेव ततु ।"--गुरु के स्वरूप का वर्णन है कि उपाय-रूपी वन का वह वंसत ऋतु है । जैसे वसत ऋतु के होने से सारा वन प्रफुल्लित हो उठता है, वैसे गुरु के होने से शिष्यो को उतनी साधना करनी ही नही पड़ती है । एकदम साधना का उत्कर्ष होता है, गुरु-दर्शन से, गुरु की मदद से साधको की साधना प्रफुल्लित हो उठती है । यह तो गुरु का एक वर्णन हुआ । और दूसरा वर्णन है, 'आज्ञेचा आहेव ततु ।' आज्ञा कोई स्त्री है ऐसा मानो । वैसे 'आज्ञा' शब्द स्त्रीलिंग है भी । स्त्री का सौभाग्य-ततु माना गया है पति । यह पुरानी भाषा है, इसलिए पुरानी दृष्टि से ही उसकी ओर देखिये, आधुनिक दृष्टि से नही । ज्ञानदेव ने लिखा है कि अगर गुरु नही होते, तो आज्ञा विधवा हो जाती । दुनिया मे किसीकी आज्ञा नही चलती है, सिर्फ गुरु की चलती है, क्योकि गुरु मे ज्ञान भी है और प्रेम भी है और सत्ता बिल्कुल ही नही होती है और सत्य तो होता ही है । ये सव जहां इकट्ठे होते है, वहा आज्ञा विल्कुल टाली ही नही जाती है । और दुनिया मे आज्ञा अगर कही सौभाग्यवती है, तो उस गुरु के कारण ही । किसी सरकार के कानून का वैसा अमल नही होता है, किसी सेनापति के हुक्म का वैसा पालन नही होता है, जैसा गुरु के वचन का होता है । तो मै कहना यह चाहता हू कि मनुष्य को अपना उत्सर्ग करने की प्रेरणा होती है, वह किसी एजेंसी के जरिये कम होती है । इसलिए आखिर किसी श्रद्धेय व्यक्ति का नाम लेना होता है । इसके सिवाय कही भी--शाति-सेना मे भी-- आज्ञा का नाम आता ही नही ।

एक सवाल यह खड़ा होता है कि एक दफा आज्ञा की आदत पड़ गई, तो परिणामस्वरूप क्या रेजीमेंटेशन (सैन्यीकरण) नही आयगा, क्या जीवन के दूसरे क्षेत्रो मे उसका स्पर्श नही होगा ? सोचने की वात है कि अगर तैरने के लिए यह विधान वताया जाय कि आपको नदी मे खडे नहीं होना है, लेटना है, तो क्या आपको लेटने की आदत पड जायगी और किनारे पर भी आप खड़े होने के वजाय लेटेंगे ? लेटने का विधान नदी तक ही सीमित है । किनारे आने पर खड़े ही होना है । जीवन मे कुल-मा-

कुल दिमाग जिसका आजाद होगा, वही शाति-सेना की आज्ञा का पालन कर सकेगा। जो ऐसा बुद्धू होगा, गुलाम होगा कि हर मौके पर सिर झुकाता होगा, स्वतंत्र चितन नही करता होगा, वह इस आज्ञा का पालन कभी नही कर सकेगा। जिसका सिर पचास मौके पर झुकता है, वह भगवान के सामने कभी न झुकेगा। जिसे गुलामी की आदत पड गई, वह ऐन मौके पर आज्ञा का पालन करने मे असमर्थ साबित होगा। शाति-सेना मे आदेश दिया जायगा कि फलानी जगह जाकर काम करो। तो क्या आपको वहा जाकर मर मिटना है, केवल इतना ही काम सौपा गया है ? बल्कि आपको आदेश दिया जायगा कि अपनी बुद्धि का परिपूर्ण उपयोग करके, कृपा करके जीवित वापस आइयेगा। वह आप नही कर सके, इसलिए बलिदान करने की बात आयगी। आपको यह आदेश नही जायगा कि वहा जाकर, नजदीक कही नदी देखो और उसमे डूब मरो। जहा दूसरी किसी भी प्रकार की मदद पहुचाये बिना, कोई आयोजन किये बिना, आपको एक पागल समाज के सामने फेक दिया जाता है, वहा आपको अपनी बुद्धि की, स्वतत्र विचार की पराकाष्ठा करनी होगी। आपको प्रत्युत्पन्नमति होना होगा, कर्मकुशलता की भी वहा कसौटी होगी और आप योगी है, यह बात उस मौके पर सिद्ध या असिद्ध होगी।

इसलिए इसमें किसी प्रकार का खतरा नही है। भाषा मे 'कमाड' शब्द है। पर भाषा तो समझाने के लिए इस्तेमाल की जाती है ? ईसामसीह ने 'कमांड' शब्द इस्तेमाल किया था। अतिम समय उन्होने अपने शिष्यो से कहा कि तुम एक-दूसरे पर प्रेम करो—"ए न्यू कमाडमेंट आई हैव गिवन टु यू"। यह उनकी भाषा है। अब उसका अर्थ क्या है, आप देखिये। कमाड यही है कि प्रेम करो। यह बिल्कुल प्रेम की परिभाषा है। हमने कल व्याख्यान मे नानक का वचन सुनाया, जिसमे, 'हुक्म' शब्द इस्तेमाल किया गया है। एक प्रसग आता है कि जहा गुरु, परमेश्वर, सत्य इनमे भेद ही नही रहता है, ये सब पर्यायरूप हो जाते है, ऐसी निष्ठा जब पैदा होती है, तब मनुष्य अपने को झोक देता है। इसलिए शाति-सेना मे विचार

की स्वतत्रता में कोई बाधा नही आती है और 'रेजीमेटेशन' (सैन्यीकरण) का कोई सवाल ही पैदा नही होता हैं।

जगह-जगह नेता बनाये जायं, यह जरूरी नही है। परंतु जगह-जगह गुरु, मार्गदर्शक उपलब्ध हो, तो खुशी की बात है, दुःख की नही। ऐसे उपलब्ध नही होगे और उनकी जरूरत भी नही है, परतु अगर हो, तो क्या हर्ज है ? आपके पास रेफरेस (सदर्भ) के लिए डिक्शनरी पड़ी है, तो उससे आपको कोई तकलीफ नही होगी। यह डिक्शनरी आपसे यह नही कहेगी कि आप कौन-सा शब्द इस्तेमाल करे। आप विचार जरूर करें। परतु जहा आपको जरूरत पडेगी, वहा उसको 'रेफर' किया (सदर्भ लिया) जाता है; वैसे ही कोई नेता हो, तो रेडी रेफरेंस (*तात्कालिक सन्दर्भ*) के लिए आपके पास कुछ कहे, इतना ही समझना चाहिए। शाति-सेना के काम में आपको दो शब्द कहे जायगे कि 'वहां पहुचो।' इसके सिवाय और कोई आज्ञा नही होगी और कोई बौद्धिक मदद भी आपको नही मिलनेवाली है। कुल की कुल बौद्धिक मदद आपको अंदर से निकालनी पडेगी। नही तो ऐसे खयाल से कोई शाति-सैनिक बनेगा कि इसमे सोचने की बात है नही, बाबा आज्ञा देता रहेगा, तो वह इसे ठीक नही समझा। अपनी बुद्धि का पूर्ण उपयोग करने की आपकी जिम्मेदारी रहेगी। आप बिल्कुल एकाकी भेजे जायगे, जैसे हनुमान को लका भेजा गया था। तुलसीदास ने लिखा है कि जगह-जगह हनुमान 'अति लघु रूप धरि' पैठते थे। रूप तो उनका पहले ही से विशाल था, परतु उसे वह वहा प्रकट नही करते थे, लघु रूप प्रकट करते थे। ऐसे मौके पर लघु रूप प्रकट करना ही बुद्धि का लक्षण है। वह बुद्धि आपमें होनी चाहिए। फिर कही ऐसा विभीषण देखना चाहिए जो अपने लिए सहानुभूतिवाला हो, तो वहा पांव रख सकेंगे। याने शांति-सेना के सैनिक की सारी प्रक्रिया हनुमान की प्रक्रिया है। इस तरह बहुत कुशलता से काम करना होगा। वह काम सैनिक की बुद्धि से होगा। पर जहां ऐसी अवस्था आये कि बुद्धि से काम नही होगा, सामनेवाले की बुद्धि पर जडता के बहुत पर्दे है, ऐसी हालत मे प्राणार्पण करने की जरूरत पड़ेगी, तो वह

भी किया जायगा । उसका फल स्थूल रुप से मिलेगा या नही, इसकी कोई परवाह नही है । वह परमेश्वर की योजना में मिलेगा ही । केवल बलिदान का परिणाम नही होगा, शुद्ध बलिदान का परिणाम होगा ।
(निवेदक-शिविर, मैसूर, प्रात ता० २७-६-५७)